पातंजलि योग दर्शन पर आधारित

योग शिक्षा

योगासन एवं प्राणायाम का सरल विवेचन
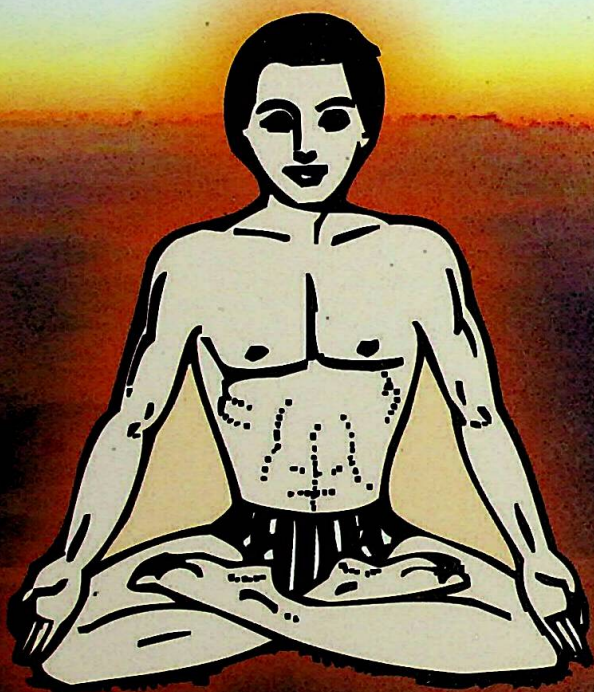
लेखक

आचार्य यज्ञदेव
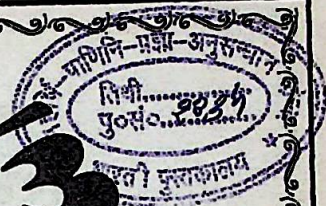
।।ओ३म।।

गावो विश्वस्य मातरः

गोरक्षा के उपाय

गोमाता की प्राचीन अवस्था लाने के लिये निम्नलिखित गोचार्या का पालन करें।

१. प्रत्येक कृषक एक गाय अवश्य पाले।
२. गैर कृषक जो गोपालन में असमर्थ है गोशाला में एक गाय का खर्च भेजे।
३. घर में गोपालक भी गोशाला में दान दें। सामूहिक गोसेवा का भागी बनें।
४. वर्ष में एक मास निःशुल्क गोसेवा करने का व्रत लें।
५. कम से कम दस गायें दूसरों के घर अवश्य बन्धवायें।
६. विवाह शादी पुत्र उत्पत्ति पर गोशाला में दान करें।
७. प्रतिदिन कुछ न कुछ आटा आदि जमा कर मास के अन्त में या त्यौहार पर एकत्रित आटादि गोशाला में भेजें।
८. दीपावली, मकर संक्रान्ति पर गुड़ दलिया गोशाला में दानकर पुण्य के भागी बनें।
९. प्रत्येक गोभक्त कम से कम चालीस ग्रामों के बीच एक गोशाला अवश्य खुलवाने हेतु जान की बाजी लगाये।
१०. वैदिक युग लायेंगे, गोसेवा करवायेंगे।
देश से शराब हटायेंगे गौ का दूध पिलायेंगे।
जय वेद, जय गौ, जय भारत।

आचार्य बलदेव

आर्यप्रतिनिधि सभा हरियाणा के प्रधान, गुरुकुल झज्जर के संरक्षक, महर्षि दयानन्द भ्रूण परिवर्तन केन्द्र (गायों का) धडोली के अध्यक्ष, संचालक गुरुकुल कालवा एवं राष्ट्रीय गोशाला धडोली, जीन्द (हरियाणा)

दूरभाषः ०१६८६-२६८५६२
राष्ट्रीय गोशाला धडौली, (जीन्द) हरियाणा- १२६११३
दूरभाषः ०१६८६-२६८३४८
आर्ष महाविद्यालय कालवा, गोहाना रोड, जीन्द (हरियाणा)

योग शिक्षा

महर्षि पातंजलि प्रणित अष्टांग योग का
सरल एवं सहज विवेचन

तथा

मधुमेह, मोटापा, गैस, कब्ज, वातरोग, श्वासरोग,
तनाव, एलर्जी, नजला तथा हृदयरोग आदि जटिल
व्याधियों की प्रमाणिक एवं अनुभव
सिद्ध चिकित्सा

लेखक
आचार्य यज्ञदेव

प्रकाशकः
आचार्य आरोग्य मंदिर ट्रस्ट

प्रकाशकः आचार्य आरोग्य मंदिर ट्रस्ट
किशन नगर, हिण्डौन सिटी (राज०) - ३२२२३०
दूरभाष : ०७४६९-२३४४४४

सर्वाधिकारः प्रकाशकाधीन

प्र. प्रभारीः रवि गुप्ता
(बी. फार्म.)

संस्करणः प्रथम, जनवरी २००५

मूल्यः ४५/-

मुद्रकः जोजो कम्प्यूटर्स एण्ड प्रिन्टर्स
भरतपुर (राज.) ३२१००१
दूरभाषः ०५६४४-२३०८५२

पुस्तक प्राप्ति स्थानः

पातंजलि योगधाम
आर्यनगर, ज्वालापुर
जिला- हरिद्वार (उत्तरांचल)
दूरभाष : ०१३३४-२५४०३८

गर्ग साहित्य सदन एवं हवन समिधा भंडार
वजीरपुर दरवाजा, कलैक्ट्री मार्ग,
करौली (राजस्थान)
दूरभाष : ०७४६४-२२७३२१

वैदिक योग आश्रम
अईनिया धरमूनाला,
कोटमौहल्ला के आगे,
जिला- आजमगढ़ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०५४६२-२२१५५८
मोबाइलः ०९४१५२४०६८८

टंकारा साहित्य सदन
आर्य समाज, हिण्डौन सिटी (राज०)
दूरभाष : ०७४६९-२३४९००

नोटः- चूंकि यह पुस्तक पातंजलि योग दर्शन पर आधारित है अतः किसी भी योग की पुस्तक के साथ समानता होने पर इसे मात्र एक संयोग कहा जाएगा।

समर्पण

पूज्यपाद आचार्य श्री बलदेव जी के चरणों में

सादर समर्पित।

हमारे आदरास्पद आचार्य श्री बलदेव जी का जीवन हम सभी के लिए प्रकाशस्तम्भ का कार्य करता है। जब कोई राह न सुझाई दे तब आचार्यजी का कृतित्व हमें आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा देता है। पूज्यपाद् आचार्यप्रवर का जन्म वर्तमान हरियाणा प्रान्त के ग्राम सरगथल में माघ शुक्ल प्रतिपदा सम्वत् १९८७ में हुआ जो गोहाना तहसील, जिला सोनीपत में आता है। पिता श्री गूगनसिंहजी ने पितृसुलभ ममत्व से आपका पालन किया। बचपन से ही वैराग्यवृत्ति के कारण आप परिवार त्यागकर सन् १९६२ में गुरुकुल झज्जर आ गये लेकिन यहां परिजनों का आना-जाना लगा रहा, इस कारण आप उ.प्र. में सिरसागंज आदि स्थानों पर अष्टाध्यायी व महाभाष्यादि का अध्ययन कर पुनः गुरुकुल झज्जर आ गये। यहां आप सात वर्षों तक मुख्याध्यापक पद पर कार्यरत रहे। यहां से आप १५ जून १९७१ में गुरुकुल कालवा आ गये।

ऋषिराज दयानन्द ने गोसेवा का बहुत महात्म्य लिखा है और अपने काल में करुणापुरुष दयानन्द ने गोसेवा के लिए बहुत यत्न भी किया। हमारे आचार्यजी ने अन्यान्य कार्यों के साथ गोसेवा को मुख्य लक्ष्य बना कार्यारम्भ किया। धडोली गांव में आपने सन्

१६६० में गोशाला प्रारम्भ की जिसमें ३५०० गायें हैं। आपको सुझाव दिया गया कि दुधारू गायें भी रखें जिससे कुछ आय हो सके। सम्मान्य आचार्यजी का उत्तर था-दूध देने वाली गायें तो कोई भी रख लेगा। निराश्रित गायों का रक्षण हम नहीं करेगें तो कौन करेगा।

आपने गोसेवा के लिए जागृति हेतु अनेकों उल्लेखनीय कार्य किये हैं। सात अक्टूबर १६६८ में धडोली में अन्तर्राष्ट्रीय गौरक्षा महासम्मेलन, फिर २१ जून २००१ में पलवल में सम्मेलन किया जिसमें डेढ़ लाख लोगों ने भाग लिया। ७ अक्टूबर २००१ को पुन्हाना में विशाल स्तर पर सम्पन्न सम्मेलन में भी एक लाख लोगों ने भाग लिया।

गोरक्षार्थ चेतना हेतु आपने यमुना के किनारे हरियाणा से उत्तर प्रदेश तक एक रैली का सफल आयोजन किया

वर्तमान में आप आर्यप्रतिनिधि सभा हरियाणा के प्रधान, गुरुकुल झज्जर के संरक्षक, महर्षि दयानन्द भ्रूण परिवर्तन केन्द्र (गायों का) धडोली के अध्यक्ष हैं।

आभार

इस पुस्तक के लेखन में जिन ग्रन्थों का हमने उपयोग किया है उन ग्रंथों के रचयिताओं के प्रति मैं अपना आभार एवं कोटिशः धन्यवाद प्रदान करता हूँ।

मैं अपने गुरुवर्य, आत्मदृष्टा, वेदज्ञ, श्रोत्रीय, ब्रह्मनिष्ठ, करुणासागर, महान गौभक्त, कर्मयोगी, दयानिधि, पूज्यवर आचार्य श्री बलदेव जी महाराज के चरण कमलों में सादर वंदना करता हूँ जिन्होंने व्याकरण, दर्शन, उपनिषद आदि आर्ष ग्रंथों को पढ़ाकर मेरे अज्ञान को दूर किया तथा मुझे सभ्य एवं सम्मान का पात्र बनाकर ईश्वराभिमुख किया।

सर्वप्रथम प्राणायाम एवं योगासनों का क्रियात्मक ज्ञान देने वाले पूज्यपाद स्वामी देवव्रत जी, निरुक्त का अध्यापन करने वाले आचार्य सुदर्शन देव जी, मेरे जीवन को साधनामय बनाने वाले पूज्यपाद स्वामी दिव्यानंद जी महाराज, समय-समय पर अपनी शुभ प्रेरणाओं से सहयोग देने वाले आचार्य श्री कृष्णदेव जी महाराज, अपने अमूल्य सुझावों से मेरा मार्गदर्शन करने वाले पितृ तुल्य स्नेही श्री प्रताप कुमार जी "साधक", पूज्यपाद स्वामी ऋतमानंद जी महाराज प्रधान वैदिक योगाश्रम अइनिया आजमगढ़, मेरे प्रेरणा स्त्रोत पूज्य पाद ब्र. श्री नरेन्द्र जी महाराज संचालक वैदिक योगाश्रम अइनिया आजमगढ़ आदि समस्त गुरुजनों को मैं सादर प्रणाम करता हूँ और आशा करता हूँ कि ये सभी गुरुजन मेरे ऊपर अपनी कृपा दृष्टि सदैव बनाये रखेगें।

इस पुस्तक के लेखन, सम्पादन, साज-सज्जा एवं अन्य सभी महत्वपूर्ण कार्यों के क्रियान्वयन में अत्यन्त सहयोगी एवं कृपाकांक्षी, स्नेहभाजी रवि गुप्ता को कोटिशः साधुवाद एवं

अपना शुभार्शीवाद प्रदान करता हूँ। प्रभू इन्हें बल, बुद्धि तथा अपार ऐश्वर्य प्रदान करे।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने में अत्यन्त सहयोगी आचार्य आरोग्य मंदिर ट्रस्ट के सभी सदस्यों को कोटिशः धन्यवाद एवं साधुवाद प्रदान करता हूँ।

अन्त में मैं सच्चिदानंद घन परमपिता परमेश्वर को प्रणाम करता हूँ कि उसने मुझे इस कार्य को करने योग्य समझा और मुझ जैसे अल्पज्ञ से यह कार्य सम्पन्न करवाया। इस कार्य में यदि कोई भूल-चूक हुई हो तो विद्वजनों एवं सुविज्ञ पाठकों से मैं क्षमा प्रार्थी हूँ साथ ही मेरा निवेदन है कि उन त्रुटियों से हमें अवगत् करावें जिससे अगले संस्करण में हम उन्हें दूर कर सकें।

धन्यवाद

आचार्य यज्ञदेव
(योगाचार्य एवं व्याकरणाचार्य)

संपादकीय

महाकवि कालिदास जी ने धर्म का आदि स्त्रोत शरीर को बताते हुए लिखा है कि "शरीरमाद्यम् खलु धर्मसाधनम्" अर्थात् धर्म का आदि साधन शरीर ही है। इसीलिए पूर्वजों का सन्देश था कि "पहला सुख निरोगी काया" कहने का भाव यह है कि मनुष्य इह लौकिक तथा पारलौकिक दोनों सुखों की प्राप्ति केवल शरीर के माध्यम से ही कर सकता है। धर्म, अर्थ काम तथा मोक्ष रूप पुरुषार्थ चतुष्ट्य का मुख्य आधार भी इसी शरीर को ही माना जाता है। इसी लिए महर्षि पातंजलि ने योग दर्शन मे चित्त को विक्षिप्त करने वाले प्रमुख अन्तरायों में पहला अन्तराय व्याधि को ही माना है। इसी प्रकार महर्षि चरक ने अपने अमर ग्रन्थ चरक संहिता सूत्राध्याय १/१५-१६ में वर्णित किया है कि- "धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्" अर्थात् धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष में आरोग्यता ही उत्तम मूल है।

स्वस्थ व्यक्ति के लक्षण (पहचान) बताते हुए महर्षि सुश्रुत ने लिखा है कि- "समदोषः समाग्निश्च समधातु मलक्रियाः।

प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्यभिधीयते।।"

अर्थात् जिसके वात, पित्त तथा कफ नामक दोष समान हैं, जठराग्नि न तीव्र है न मन्द है, शरीर को धारण करने वाली सातों धातुऐं जैसे रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और वीर्य

समानुपात में हैं, मल-मूत्र विसर्जन की क्रिया भी ठीक है, दसों इन्द्रियां, मन तथा इस शरीर का राजा आत्मा प्रसन्नचित्त हो तो वह व्यक्ति स्वस्थ कहलाने का अधिकारी है। क्योंकि "स्वास्मिन् स्थ स्वस्थः" अर्थात् जिसका अपने तीनों शरीरों के ऊपर पूरा अधि िकार है वह व्यक्ति पूर्ण स्वस्थ है।

इसी तरह महर्षि चरक ने भी शरीर को धारण करने वाली शक्तियों को प्रमुख रूप से तीन भागों में बांटा है। यथा- "त्रयोयस्तम्भाः आहारनिद्राब्रह्मचर्यमिति" आहार, निद्रा तथा ब्रह्मचर्य ये तीन स्तंभ इस शरीर रूपी भवन को धारण कर रहे हैं।

इनमें से यदि कोई एक स्तंभ भी दुर्बल हो जाये तो यह शरीर दुर्बल हो जाता है। अतः युक्त आहार-विहार तथा प्राणायाम आदि यौगिक क्रियाओं से इसे दृढ़ रखना परमावश्यक है। क्योंकि मानवजाति ने आज जितनी अधिक उन्नति की है उतनी ही अधिक मात्रा में जलवायु आदि प्राकृतिक साधनों को प्रदूषित करके अपने स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ किया है। वैज्ञानिकों ने जितने अधिक साधन मानव की सुख सुविधा हेतु उत्पन्न किये आज का मनुष्य उतना ही हताश एवं निराश है। आज बिना नींद की गोलियों के नींद नहीं आती तथा बिना जुलाब लिए प्रातः मल विसर्जन भी नहीं होता। आज सुख-शान्ति की आशा में मादक पदार्थों के सेवन का प्रचलन भी तेजी से बढ़ रहा है। हम स्वास्थ्य लाभ के लिए जितनी दवाओं का सेवन करते जा रहे हैं उतना ही बीमारियों को बढ़ावा देते जा रहे हैं। अतः मनुष्य चारों ओर से निराश होकर एक बार फिर कुदरत की शरण में आ रहा है। आज प्रत्येक शहर तथा गांव में योगाभ्यास प्रारम्भ हो गया है। ७५ प्रतिशत से ज्यादा संख्या में

नगर वासी प्राणायाम तथा योगिक क्रियाओं को अपना चुके हैं। क्योंकि बल, शक्ति, सामर्थ्य का भंडार तो केवल प्राणों में ही निहित है। यह रहस्य जानने वाले अब प्राणसाधना अर्थात् प्राणायाम की तरफ विशेष ध्यान दे रहे हैं।

हृदय रोग, मोटापा, मधुमेह, कब्ज आदि भंयकर रोग प्राणायाम एवं योगासनों के थोड़े दिनों के नियमित अभ्यास से ही दूर हो जाते हैं। ये क्रियाऐं जितनी लाभदायक हैं ठीक ढंग से न करने पर उतनी ही हानिकारक भी हैं इसलिए इनको करने से पहले किसी योग्य गुरु से इनका क्रियात्मक ज्ञान लेना अत्यावश्यक है। लोगों को ठीक-ठीक जानकारी मिल सके तथा योग शिविरों के दौरान योग साधकों द्वारा पुस्तक की मांग को दृष्टि में रखते हुए इस पुस्तक का लेखन किया जा रहा है।

आशा है योगाभ्यासी गण इस पुस्तक में वर्णित ज्ञान एवं प्रक्रियाओं का अनुसरण एवं नियमित अभ्यास कर अपनी शारीरिक एवं मानसिक उन्नति के मार्ग पर प्रशस्त होंगे।

रवि गुप्ता
संपादक एवं मंत्री
आचार्य आरोग्य मंदिर ट्रस्ट
हिण्डौन सिटी (राज.)

अनुक्रमणिका

भूमिका

आज के इस भौतिकवादी युग में हर मनुष्य दुःखी है। सभी को सुख की तलाश है। सभी अपने-अपने स्तर से प्रयत्नशील हैं। हमारे पूर्वजों ने संकेत किया था कि **'पहला सुख निरोगी काया'** कहने का भाव यह है कि यदि मनुष्य सुखी होना चाहता है तो उसे अपने शरीर को स्वस्थ बनाना होगा। महर्षि देव दयानन्द जी ने भी आर्य समाज के नियमों में छठा नियम यही बनाया है कि 'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है- अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना' पुराने ग्रीकवासी भी आज से हजारों वर्ष पूर्व यह मानते थे कि **'स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है।,** (A Sound Mind in a Sound Body)

सम्पूर्ण सुखों का आधार इस शरीर को स्वस्थ बनाये रखने के लिए योगासनों का विशेष महत्व है। योगासन से शरीर के सभी आन्तर्बाह्य अंग स्वस्थ रहते हैं। लेकिन किसी योग निष्णात गुरू से अच्छी तरह समझे बगैर योगासनों का अभ्यास लाभ की जगह कभी-कभी हानि भी पहुंचा देते हैं। इसीलिए इस सम्बन्ध में मुख्य-मुख्य आवश्यक दिशा निर्देश यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

दैनिक आहार-विहार से शरीर में उत्पन्न मलमूत्र और विकार निम्नलिखित सात मार्गों से बाहर निकलते हैं -

१. दोनों नासिका छिद्रों से
२. दोनों नेत्रों से
३. कानों द्वारा
४. मुख के द्वारा
५. गुदा द्वारा
६. जननेन्द्रिय द्वारा
७. त्वचा द्वारा

यदि इन सातों मार्गों द्वारा सम्यक्तया मलमूत्र आदि विकार बाहर नहीं निकलते तभी यह शरीर रोगी हो जाता हैं। योगासनों द्वारा उपर्युक्त सातों मार्गों से शरीर के विकार मलमूत्रादि ठीक ढंग से प्रतिदिन निकलते रहते हैं जिसके परिणाम स्वरूप हमारा शरीर स्वस्थ रहता है।

अध्याय १

योगासन : महत्त्व, नियम और वर्गीकरण

योगासनों का महत्व :-

१. महर्षि बाणभट्ट ने लिखा है कि - "कसरत अर्थात् योगासन करने से शरीर हल्का एवं फुर्तीला रहता है, कार्यशक्ति बढ़ती है, अग्नि प्रदीप्त होती है तथा मेद वृद्धि नहीं होती है।"

२. भाव प्रकाश के शब्दों में - "कसरत करने से जिनके अवयव दृढ़ हो गये हों, उन्हें कभी कोई रोग नहीं होता। विरूद्ध अर्थात् ठीक से न पचने वाला भोजन भी व्यायाम से पच जाता है। कसरत करने वाले के शरीर में कभी शिथिलता नहीं आती। वृद्धावस्था अतिशीघ्र नहीं आती तथा तन और मन दोनों सदैव स्वस्थ रहते हैं।"

३. योगासनों से शरीर के स्नायु कसे रहते हैं, जिससे वे दृढ़ और मजबूत बनते हैं। योगासनों के प्रभाव से वे पुष्ठ होकर, कसकर बढ़ते हैं। शरीर विज्ञान में निष्णात किसी विद्वान् का कथन है- "Food is making blood. Exercising is distributing blood. Breathing is purifying blood.

अर्थात् भोजन पचने से रस बनता है, व्यायाम से शरीर के सभी अंगों को रक्त पहुँचता है और श्वसनक्रिया से रक्तशुद्ध होता है

४. शरीर रूपी यन्त्र की तीन प्रमुख क्रियाऐं बतलाई गयी है-

१. भोजन का रक्त में रूपान्तरण २. योगासन से रक्त को गति में रखना और ३. श्वास-प्रश्वास से रक्त का शुद्धीकरण। अलग-अलग दिखने वाली ये तीनों क्रियाएँ वस्तुतः एक ही क्रिया है। जैसे- व्यायाम से पाचन क्रिया ठीक

होगी, श्वसन क्रिया वेग से चलती है, फेफड़ों को शुद्ध वायु (ऑक्सीजन) अधिक मात्रा में प्राप्त होती है, जिससे रक्त शुद्धि की क्रिया भी सुचारू रूप से होती है।

५. जिनकी उम्र भारी व्यायाम करने के योग्य न हो उनके लिए योगासन अत्यन्त लाभ प्रद रहते हैं। अर्थात् युवावस्था में भारी व्यायाम तथा प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था में योगासन ही लाभप्रद होते हैं।

६. कुछ लोग प्रातः भ्रमण को ही व्यायाम मान लेते है लेकिन भ्रमण से तोंद का मेद कभी भी कम नहीं होगा, इसके लिए उचित योगासनों को ही अपनाना पड़ेगा।

७. दौड़ या फिर अन्य भारी कसरतें करने से कई लोगों को हानि उठानी पड़ती है। यदि सन्धिवात का रोगी ऐसी कोई भी कसरत करता है तो वह और भी अधिक बेकार हो जायेगा। अतः बिना समझे किया गया व्यायाम खतरे से खाली नहीं होता।

८. व्यायाम के अन्य साधनों में अधिक स्थान एवं व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है लेकिन योगासन में थोड़े से स्थान की जरूरत पड़ती है।

९. व्यायाम की अन्य पद्धतियों की अपेक्षा योगासन का प्रभाव मन और इन्द्रियों पर अधिक मात्रा में पड़ता है। अतः योगासन से एकाग्रता उत्पन्न होती है जो की ध्यान के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

१०. योगासनों से मल तथा अन्य विकार भली भांति बाहर निकल जाते हैं, जिससे शरीर स्वस्थ रहता है।

११. योगासनों से हड्डियों में लचक एवं शरीर में स्फूर्ति आती है, काम करने की क्षमता में वृद्धि होती है, जिससे व्यक्ति चिर युवा रहता है।

१२. आयुष्य, यौवन और स्वास्थ्य मेरूदण्ड के लचीलेपन पर ही निर्भर है। जो आसनों द्वारा ही सम्भव है।

१३. योगासनों और प्राणायाम के सम्यक् (उचित) अभ्यास से कब्ज, वायु (गैस) मधुमेह, रक्तचाप (ब्लडप्रेशर) हर्निया, सिरदर्द, मोटापा, हृदय रोग, दमा-श्वास आदि रोग मिटाए जा सकते हैं।

योगासन के सामान्य नियम

योगासनों को सर्वप्रथम किसी योग्य गुरू से सीख लेना चाहिए। बिना ठीक ढंग से सीखे ये आसन लाभ की जगह हानि भी कर देते हैं। इसी सम्बन्ध में हम पाठकों का ध्यान कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर दिलाना चाह रहे हैं। इन का पूरा-पूरा पालन करते हुए ही योगासन प्रारम्भ करें -

१. आसन व्यायाम के लिए कम से कम पन्द्रह मिनट और अधिक से अधिक तीस मिनट का समय पर्याप्त रहता है।
२. अपनी शारीरिक क्षमता एवं रोग की प्रबलता के अनुसार ही चुनकर चार-पांच आसनों को ही ठीक ढ़ंग से करना चाहिए।
३. योगासनों के लिए प्रातः काल का ही समय सर्वोत्तम रहता है। लेकिन अनुभव में ऐसा आया है कि सायंकाल शरीर में लचक अधिक रहती है, अतः सायंकाल भी योगासान किये जा सकते हैं। लेकिन सांयकाल योगासन से लगभग ४ घन्टा पूर्व ही भोजन हो जाना चाहिए।
४. प्रातःकाल शौच-स्नानादि दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होकर प्रसन्न चित्त पूर्ण सकारात्मक भावना के साथ खाली पेट योगासनों का अभ्यास करना चाहिए।
५. यदि किसी कारण आसनों से पूर्व स्नान नहीं कर पाये हों तो आसनों के आधा घन्टा बाद शीतल जल से ही स्नान करें। सर्दियों में गुनगुने जल से भी स्नानं किया जा सकता है।
६. आसन समतल, स्वच्छ और शान्त स्थान पर ही करना चाहिए भूमि पर दरी या कम्बल बिछाकर योगासनों का अभ्यास करना चाहिए।
७. योगासन के समय कमरे की खिड़कियाँ और दरवाजे खुले रखना चाहिए ताकि बाहर की स्वच्छ हवा कमरे में आ सके।
८. योगासन के समय पुरूषों को लंगोट अवश्य बांधना चाहि़ए। ऊपर से जांघिया या हाफपेण्ट आदि पहन सकते हैं। महिलाओं के लिए पंजाबी सूट या फिर स्लैक्स विशेष अनुकूल रहता है।
९. जटिल रोगों में या अधिक ज्वर में योगासन नहीं करना

चाहिए। महिलाओं को मासिक धर्म के समय तथा गर्भधारण के चार महिनों के बाद से प्रसूति के तीन महीने बाद तक आसन नहीं करना चाहिए।

१०. आसन करते समय बातचीत बिल्कुल भी न करें। जिन अंगों पर जोर अधिक पड़ता है वहीं ध्यान लगाना चाहिए।

११. एक कसरत (आसन) के सम्यक् अभ्यास के बाद ही दूसरी कसरत करनी चाहिए। सभी कसरतें एक साथ जल्दवाजी में नहीं करनी चाहिए। अपनी शारीरिक क्षमता और समय की मर्यादा का ध्यान रखकर ही कसरत का आयोजन करना चाहिए।

१२. श्वासोच्छ्वास की क्रिया नाक से ही हो। मुँह सदैव बन्द रखें नाक और गला दोनों साफ रखें।

१३. योगासन के समय लम्बी और गहरी साँसें ही लें। इससे शरीर में स्फूर्ति उत्पन्न होगी और थकान भी नहीं लगेगी।

१४. योगासन करते समय शरीर को हवा का सीधा झोंका नहीं लगना चाहिए। आसन के बाद पसीने को तौलिये से रगड़कर पोंछ लें।

१५. सामान्यतः योगासनों के समय आँखें अर्ध खुली या बन्द रखनी चाहिए। ऐसा करने से एकाग्रता आएगी तथा आँखों के तेज और शक्ति में वृद्धि होगी।

१६. छुट्टी के दिन या फिर जिस दिन आप के पास पर्याप्त समय हो उस दिन पूरे शरीर पर तेल की मालिश करके सर्दियों में धूप स्नान करें, फिर बाद में आसन करें।

१७. किसी भी आसन की प्रारम्भिक स्थिति से अन्तिम स्थिति तक जाते समय और अन्तिम स्थिति से प्रारम्भिक स्थिति तक आते समय जल्दबाजी नहीं करना चाहिए।

१८. सबसे अन्त में शवासन का अभ्यास अवश्य करना चाहिए। शवासन एक सम्पूर्ण आसन माना जाता है इससे शरीर की थकावट अतिशीघ्र दूर होती है। शरीर में नयी शक्ति का

संचार होता है।

१९. आसनों के क्रम का विशेष ध्यान रखना चाहिए। एक आसन के बाद उसका पूरक आसन अवश्य करना चाहिए।

२०. योगासन तथा भोजन के तुरन्त बाद पेशाब करना आवश्यक है। इससे एकत्रित गंदगी मूत्र मार्ग से निकल जायेगी, जिससे भविष्य में गुर्दे तथा घुटनों में दर्द नहीं होगा।

२१. कोई भी कठिन आसन व व्यायाम का अभ्यास करने से पूर्व शरीर को वार्म अप (उष्ण) करने के लिये सूक्ष्म व्यायाम अवश्य करें अन्यथा अर्थराइटिस (गठिया वात) सरवाइकल (गर्दन एवं रीढ़ की मांस पेशियों का दर्द) स्लिपडिस्क (रीढ़ की हड्डियों का अपने स्थान से खिसक जाना) एवम् नाभि टलने की समस्या उत्पन्न हो सकती है।

आसनों का वर्गीकरण

योगासनों को सरलता से समझने और उनका भलीभांति अभ्यास करने की दृष्टि से यहां आसनों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप में किया जा रहा है।

१. खड़े होकर किये जाने वाले सूक्ष्म व्यायाम।
२. बैठकर किये जाने वाले सूक्ष्म व्यायाम।
३. बैठकर किये जाने वाले आसन।
४. पीठ के बल किये जाने वाले आसन।
५. पेट के बल किये जाने वाले आसन।
६. पैरों के बल किये जाने वाले आसन।
७. वैज्ञानिक सूर्यनमस्कार आसन।

यौगिक शोधन क्रियायें –

षट्कर्म– योगासन, प्राणायाम और ध्यान के अभ्यास से पूर्व शरीर को विष मुक्त एवं शुद्ध कर लेना अत्यावश्यक है। विविध दैनिक क्रियाओं से शरीर में विष संचय होता रहता है। यदि इन विषों का ध्यान न देते हुये योगासनों एवम् प्राणायाम का अभ्यास

करेंगे तो हमें अपेक्षित लाभ प्राप्त नहीं होंगे।

योग शास्त्र में छः प्रकार की शुद्धिकरण क्रिया बताई गई है।

१. नेती	२. धौती	३. नौली
४. बस्ती	५. त्राटक	६. कपाल भांति

इन शुद्धि क्रियाओं के विषय में सरल एवम् शोध पूर्ण जानकारी निम्नलिखित है–

नेति –

वैसे नेति जल, दूध, घृत तथा सूत्रादि विभिन्न प्रकार से की जाती है लेकिन यहां हम उपयोगिता एवम् सरलता की दृष्टि से केवल जल नेति का ही परिचय दे रहे हैं।

विधि – जल नेति के लिये एक विशेष प्रकार की टोंटी वाला लोटा जिसे 'नेति लोटा' भी कहते हैं उपयोग में लिया जाता है। एक किलो शुद्ध पानी लें उसमें लगभग १० ग्राम सेन्धा नमक डालकर पानी को उबालें फिर उसे ठंडा होने दें और जब गुनगुना हो जाये तब उसे नेति लोटा में भर लें। नाली के सामने खड़े होकर या पानी

(जल नेती)

के नीचे कोई पात्र रखकर आगे की ओर थोड़ा झुककर सिर को वायी ओर झुकाइये और लोटे की नली को दायें नथुने में डालिये। सिर को और अधिक झुकने दीजिये तथा लोटे को ऊंचा रखिये ताकि दायें नथुने में प्रविष्ट जल बायें नथुने से बाहर निकलने लगे। इस अवस्था में मुख को थोड़ा खोलकर श्वांस-प्रश्वांस की क्रिया मुख

से ही करें। ऐसी दशा में पानी बायीं नासिका से अपने आप बाहर निकलने लगेगा। इस क्रिया को एकाध मिनट तक जारी रखें।

इसी प्रकार लोटे की नली को बायें नथुने में डालकर दाईं तरफ सिर को झुकाकर यही क्रिया सम्पन्न करें।
(यदि आपके यहां पानी खारा है तो नमक की मात्रा कम डालें)

अन्त में 15–20 बार आगे पीछे दायें बायें गर्दन को झुकाते हुये छींक कर नाक से अवशिष्ट पदार्थ तथा बचे हुये पानी को बाहर निकाल दें। इस तरह नासिका को पूर्णतया जल रहित कर लेना चाहिए।

सावधानी :-

१. नथुने से प्रविष्ट पानी मुख में आ जाने उसे थूक दें। अन्दर न जाने दें।
२. जल नेति प्रारम्भ करने पर नये अभ्यासियों को कई बार नाक में जलन होती है, छींके आती हैं तथा आंख में आंसू भी आ जाते हैं सिर में भी दर्द या जलन का अनुभव हो सकता है। ऐसी स्थिति में अभ्यास को १–२ दिन छोड़कर पुनः प्रारम्भ करना चाहिये। ये स्वाभाविक क्रियायें हैं इनसे घबराना नहीं चाहिये।
३. जिन्हें कफ का रोग नहीं है उन्हें नमक रहित शीतल जल से धीरे-धीरे अभ्यास करना चाहिये।
४. नजला, जुकाम वाले को नमक युक्त गरम जल से ही यह क्रिया करनी चाहिये।
५. सामान्यतया दिन में एक बार प्रातः काल ही यह क्रिया करनी चाहिये जुकाम के समय या जब नाक बन्द हो उस समय जल नेति दिन में २–३ बार भी कर सकते हैं।

लाभ :-

१. इससे नासिका की सफाई ठीक ढ़ंग से हो जाती है।
२. नासिका के भीतर स्थित ज्ञान तंतु के छोर (Nerve endigs) अधिक शक्तिशाली बनते हैं।
३. इस क्रिया से जुकाम, सर्दी, साइनस तथा सिर दर्द में लाभ

होता है।

४. जल नेति के बाद प्राणायाम अधिक सुविधा से किया जा सकता है।

५. कुछ व्यक्तियों की नासिका में मासांकुर बढ़ जाने से एक या दोनों द्वार आंशिक रूप से बंद हो जाते हैं, नेति क्रिया द्वारा इस रोग को प्रारम्भिक काल में दूर किया जा सकता है।

६. जल नेति से नासिका में स्थित श्लेष्मा झिल्ली को बाह्य वातावरण में होने वाले परिवर्तन, धूल के कण, धुंआ, उष्णता, शीतलता तथा कीटाणु इत्यादि को सहन करने की शक्ति आ जाती है।

७. हठ प्रदीपिका के अनुसार नेति कपाल की शोधक, नेत्र ज्योति वर्धक एवं गले से ऊपर के समस्त रोगों को दूर करने वाली है जैसा कि वहां लिखा है -

कपाल शोधनी चैव दिव्य दृष्टिप्रदायनी।
जत्रूर्धणातरोगौयं नेतिराशु निहन्ति च।।

धौती :-

आमाशय की शुद्धि के लिये धौती क्रिया की जाती है। धौती का शाब्दिक अर्थ है धौना। जैसे हम जलादि के द्वारा ब्राह्य शरीर को धौते हैं उसी तरह शरीर के आन्तरिक भाग को धोना ही धौती कहलाती है। इसके भी सामान्यतया निम्न भेद हैं-

१. बमन धौती २. वारिसार धौती ३. गजकर्णी
४. वस्त्र धौती ५. दण्ड धौती

(वमन धौती)

यहां हम केवल वमन धौती अर्थात् कुंजल क्रिया और वारिसार धौती अर्थात् शंख प्रक्षालन काया कल्प क्रिया का ही परिचय देंगे। क्योंकि ये ही हानि रहित तथा व्यवहारिक क्रियायें हैं।

क) वमन धौती विधि :-

१. प्रातःकाल शौचादि से निवृत होकर तीन-चार किलो मन्दोष्ण जल में कुछ नमक मिला लीजिये।

२. जितना संभव हो उतना पानी पीने का प्रयत्न कीजिये।

३. थौड़ा आगे की ओर झुककर दाहिने हाथ की पहिली उंगलियां मुख में डाल कर गले को गुदगुदायें वायें हाथ से नाभि के भाग को अन्दर की ओर दबायें। इससे वमन होकर जल बाहर निकलने लगेगा। पैट में गया हुआ सम्पूर्ण पानी जब तक बाहर न निकले तब तक इसी प्रकार बार-बार मुख में अंगुली डालकर उल्टी करना जारी रखना चाहिये। इस क्रिया को बाघी क्रिया भी कहते हैं।

सावधानी:-

१. धौती प्रातःकाल खाली पेट ही करनी चाहिये।

२. इस क्रिया में पानी शीघ्रता से पीना चाहिये।

३. हाथ की अंगुलियों के नाखूनों को भलीभांति काट लेने चाहिए।

४. वमन धौती के बाद आधे से एक धन्टे तक किसी भी प्रकार का आहार नहीं लेना चाहिए।

५. आमाशय के उपदंश, उच्च रक्तचात, हृदयरोग और अण्डवृद्धि (हर्निया) से पीड़ित लोग वमन धौती न करें यह आवश्यक है।

६. सामान्यतः सप्ताह में एक बार ही करनी चाहिए।

लाभ:-

१. इस क्रिया से पाचन-अवयव शक्तिशाली बनते हैं।

२. अजीर्ण, नजला-जुकाम और दमे जैसे रोगों में वमन धौती से पूर्ण लाभ होता है।

३. पेट में स्थित विजातीय तत्व, पित्त, अम्ल और गैस का निष्कासन सम्यकतया हो जाता है।

४. मलेरिया ज्वर में भी वमन धौती से कुपित पित्त निकलकर स्वेद

आकर ज्वर का वेग मन्द पड़ जाता है और सिर की पीड़ा, चक्कर आदि शान्त पड़ जाते हैं। यह एक निरापद क्रिया है।

ख) वारिसार धौती (शंख प्रक्षालन- काया कल्प क्रिया):-

जिस प्रकार शंख को धौने के लिये उसके एक छिद्र में पानी डालकर उसे धुमाते हुये दूसरे छिद्र द्वारा निकाल देते हैं उसी प्रकार मुख से पानी पीकर क्रिया विशेष द्वारा नीचे मल द्वार से निकालने के कारण इस क्रिया को वारिसार या शंख प्रक्षालन कहते हैं। इससे मुख से लकर गुदा द्वार तक के सम्पूर्ण पाचन मार्ग की ठीक ढ़ग से सफाई हो जाती है।

विधि:-

१. वाल्टी या कलईदार पात्र में ३-४ किलो मन्दोष्ण जल लेकर उसमें दो-तीन चम्मच नमक और २ नीबुओं का रस मिला लें क्योंकि लवण और नीबू का रस पाचक होने के साथ रेचन भी करता है।

२. पहले थोड़ा जल पीने के पश्चात् मन को शान्त और स्वस्थ रखने का प्रयत्न कीजिये।

३. २-३ गिलास पानी शीघ्रता के साथ पी जायें। उसके बाद निम्नलिखित पांच आंसनों में से प्रत्येक को आठ-आठ बार करें।

(क) ताड़ासन:-

दोनों पैरों के बीच आधे से एक फुट का अन्तर रखते हुये खड़े हो जायें। दानों हाथों की अंगुलियों को आपस में फंसाकर दोनों हाथों को ऊपर की ओर ले जायें। पैरों की एड़ियों को जमीन से ऊपर उठायें और सिर को पीछे की ओर झुकाकर हाथ की अंगुलियों की ओर दृष्टि डालें। पूरे शरीर को ऊपर की ओर ताने । कम से कम १० सैकिण्ड तक शरीर को इसी तनी हुई अवस्था में रखें। फिर धीरे-धीरे अपनी मूल स्थिति में वापिस आ जायें। यह एक चक्र हुआ। इसी प्रकार कुल आट चक्र करें।

(ताड़ासन)

(ख) तिर्यक ताड़ासन
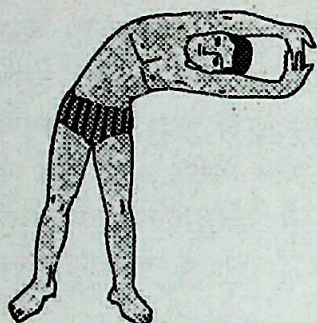
(तिर्यक ताड़ासन)

पहिले ताड़ासन की स्थिति में हाथों को ऊपर उठायें। दोनों पैरों में १-१ १/२ फुट के फासले से रखें। पैरों की एड़ियों को जमीन से उठाये रखकर शरीर को पहिले दायें फिर बायीं और झुकायें। मुख्यतः इसमें कमर को झुकाना है अतः हाथ कान से लगे हुये सीधे तने रहेंगे। इस आसन को प्रत्येक ओर आठ-आठ बार कीजिये।

(ग) कटि चक्रासनः-

दोनों पैरों के बीच १ से २ फुट का अन्तर रखते हुये खड़े रहें। दोनों हाथ शरीर की तरफ कन्धे के बराबर ऊपर उठायें। अब शरीर को कमर से दायीं ओर घुमायें। इस स्थिति में वायां हाथ दायें कंधे पर लगायें और दायां हाथ पीठ के पीछे की ओर मोड़ लें।
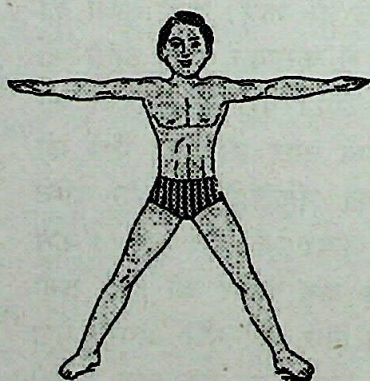
(कटि चक्रासन की क्रमशः मुद्राऐं)

इसके बाद शरीर को पुनः मूल स्थिति में ले आयें। इसी प्रकार वायीं ओर से करें। इस आसन को प्रत्येक ओर से आठ-आठ बार करना चाहिये।

(घ) तिर्यक भुजंगासनः-

जमीन पर पेट के बल लेट जायें। दोनों हथेलियों को कंधे से भुजाओं से सटाते हुये हथेलियां जमीन पर टिकाइये। पीठ के स्नायुओं की सहायता से धुड़ और सिर को ऊपर उठायें। ध्यान रहे हाथों पर ज्यादा वजन न आने पाये अब सिर को बायीं ओर घुमाकर बायें पैर की एड़ी को देखिये। इसके बाद गर्दन सीधी करते हुए मस्तष्क जमीन पर रखिए। इसके बाद सिर को दायें ओर घुमाकर दायें
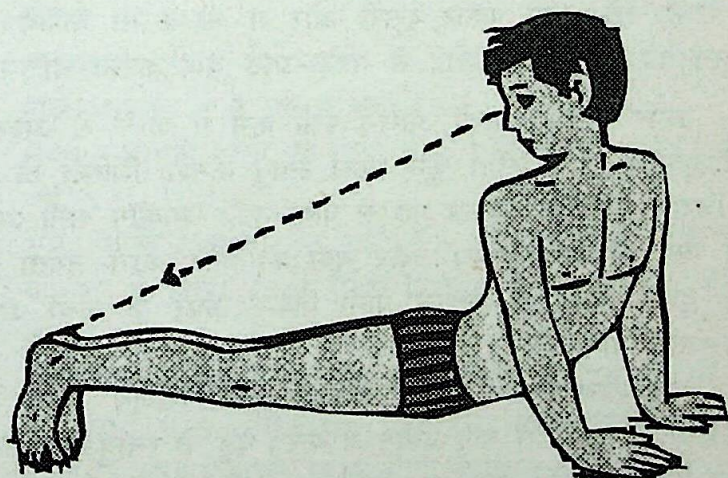
(तिर्यक भुजंगासन)

पैर की एड़ी देखिये। फिर मूल स्थिति में आ जायें। इस आसन को आठ बार किजिये।

(ङ) उदराकर्षणासनः-

(उदराकर्षणासन)

उकडू बैठकर दायें पैर के घुटने को वायें पैर की पिण्डली के पास लाते हुए करम को वाईं ओर मोड़िये दोनों हथेली दोनों घुटनों पर टिकी रहें। इसी प्रकार दूसरी ओर से भी करना चाहिये। इस आसन को भी प्रत्येक ओर से आठ-आठ बार करना चाहिये।

ऊपर लिखित पांचों आसन इसी क्रम में करने से आमाशय और गुदा के बीच स्थित कुछ खास स्नायु क्रमशः शिथिल हो जाते है। जिसके परिणाम स्वरूप मुंह से पीया हुआ नमकीन पानी आहार और मल को अपने साथ लेकर गुदा की ओर बढ़ने लगता है।

दुबारा फिर २ गिलास पानी पीकर ऊपर के पांचों आसन आठ-आठ बार करें।

अब शौचालय में जाकर बैठिये। मल विसर्जन अपने आप होगा। अपनी ओर से बल प्रयोग न करें। पेडू के स्नायुओं को यथा शक्ति शिथिल रखें। मल का विसर्जन न हो तो भी १-२ मिनिट रुककर शौचालय से बाहर आ जायें।

पुनः दो गिलास पानी पीकर ऊपर लिखित पांचों आसनों को आठ-आठ बार करके शौचालय में जायें। मल को बाहर निकालने के लिए जोर बिल्कुल न लगायें। यही क्रिया बराबर जारी रखें। अन्ततः अपने आप मल विसर्जन होने लगेगा। प्रारम्भ में कठिन तथा बाद में पानी मिश्रित मल निकलेगा।

पानी पीने, आसन करके शौचालय में जाकर बैठने का क्रम जारी रखने से अन्त में गुदा द्वार से केवल पानी ही बाहर निकलने लगेगा। जब जैसा साफ पानी मुख से पीया है वैसा ही पानी गुदा से निकलने लगे तब समझ जायें कि सम्पूर्ण पाचन पंत्र रिक्त हो गया है। गुदा द्वार से साफ पानी निकलना इस काया कल्प क्रिया की चरम स्थिति है। यहां तक पहुंचने के लिए औसतन १५ से २० गिलास पानी पीना पड़ता है। ८ से १० बार शौचालय जाना पड़ता है।

यह वारिसार (काया कल्प क्रिया) व्यक्ति को शिथिल कर देती है इसलिये इसकी समाप्ति पर कम से कम आधा घंटे तक शवासन करके पूर्ण आराम करें।

सावधानी :-

१. वारिसार धौती प्रातःकाल मल मूत्र विसर्जन के तुरन्त बाद खाली पेट ही करना चाहिये।

२. पहली बार यह क्रिया किसी योग्य गुरू की देख-रेख में ही करनी चाहिये।

३. आमाशय (जठर) या आंतों के उपदंश से पीड़ित रोगी को शंख प्रक्षालन नहीं करना चाहिये।

४. उच्च रक्तचाप वालों को सिर्फ नीबू पानी का ही प्रयोग करना चाहिये।

५. मूत्र पिण्डों अथवा रक्त परिभ्रमण की तकलीफों वाले रोगी को भी ये क्रिया किसी योग्य विशेषज्ञ के मार्ग दर्शन में ही करनी चाहिये।

६. इस क्रिया के करने के बाद चावल मूंग की खिचड़ी या गेहूं के दलिये में ५० से १०० ग्राम शुद्ध गोघृत डालकर खाना चाहिये। भोजन करते समय पानी बिल्कुल भी न पीयें। २४ घंटे तक मट्ठा, दही, दूध अधिक पानी का प्रयोग व भारी भोजन नहीं करना चाहिये।

७. पूर्णतया विश्राम करना चाहिये लेकिन नींद नहीं आये।

८. क्रिया के पश्चात् गर्म जल से निर्वात स्थान पर स्नान करना चाहिये। ठण्डे पानी से स्नान न करें।

९. मौसम खराब हो तो भी यह क्रिया नहीं करनी चाहिये। इस

क्रिया को सामान्य रूप से महिने में २ बार ही करना चाहिये।

१०. विश्राम करते वक्त चाहे गर्मी हो अथवा सर्दी साधक को गर्म रजाई अथवा कंबल अवश्य ओढ़ना चाहिए।

लाभः-

१. सभी प्रकार के उदर संबधी जैसे कब्ज, मन्दाग्नि, गैस अम्लपित्त, खट्टी डकारें एवम् बवासीर आदि निश्चित रूप से दूर होते हैं।

२. इस क्रिया से रक्त स्थित शक्कर (Blood Sugar) की मात्रा कम हो जाती है। अतः डायबिटीज मेलीटस (मधुमेह) में बहुत उपयोगी है।

३. इस क्रिया से मोटापा, हृदय रोग, श्वांस रोग, वात रोग मासिक संबन्धी विकृतियां तथा चर्म रोग सम्बन्धी विकृतियां भी दूर होती हैं।

४. लीवर, किडनी, पैनक्रियाज तथा स्पिलिन आदि से सम्बन्धित रोगों में भी इसका चमत्कारिक लाभ देखा गया है।

अग्निसारः-

यह पेडू के स्नायुओं का एक सुन्दर व्यायाम है, इसीलिए इसे उदरसंचालन क्रिया भी कहते हैं। इस क्रिया के निम्नलिखित चार चरण हैं।

क) सर्वप्रथम दोमों पैरों में एक फुट का अन्तर रखते हुए खड़ा होना चाहिए। दोनों हाथों को कमर पर इस प्रकार से रखें कि अंगूठा पीठ की ओर हो तथा शेष चारों अंगुलियां पेट पर नाभी के करीब। अब श्वास-प्रश्वास की क्रिया सामान्य रखते हुए कम से कम ५० बार अंगुलियों की सहायता से पेट के भाग को आगे-पीछे करें।

ख) दूसरी स्थिति के लिए सामान्य रूप से सावधान खड़े रहें। जव श्वास अन्दर प्रविष्ट हो तो यथा शक्ति पेट को बाहर निकालें तथा जब प्रश्वास बाहर को निकलने लगे तब यथा शक्ति पेट को पीछे की ओर खींचे यानि की पिचकायें। यह क्रिया भी कम से कम ५० बार करें।

ग) श्वास को पहले फेफडों में भरें फिर श्वास को बाहर छोड़कर यथा शक्ति ऊपर नीचे करें। जब दिल घबरायें तो धीरे-

धीरे अन्दर लेकर थोड़ी देर सामान्य श्वास-प्रश्वास लें। पुनः इसी प्रकार करें। कुल तीन चक्र सम्पन्न करें।

घ) पहिले श्वांस को फेफड़ों में भरें फिर मूलवंद ओर जालंधर बंद लगाकर यथाशक्ति पेट को आगे-पीछे करें। बड़े आराम से सहजता पूर्वक आसानी से पेट आगे पीछे हो उतनी बार ही करना चाहिये। बलपूर्वक अधिक देर तक करने का प्रयास न करें इसके भी तीन चक्र करने चाहिये।
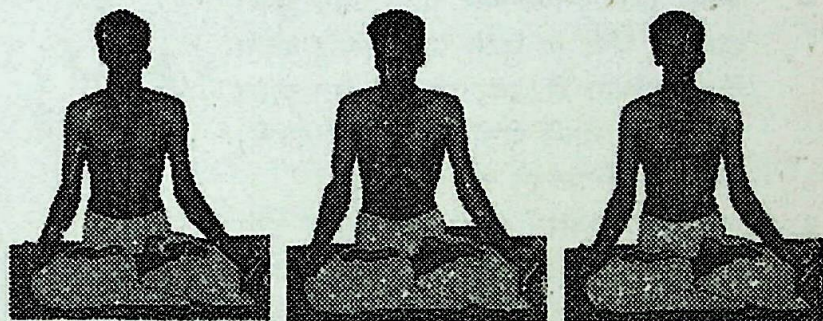
(अग्निसार)

सावधानीः-

जिन्हें अम्लपित्त अमाशय या आंतों में तिल्ली बड़ी हुई है उन्हें अग्निसार क्रिया नहीं करनी चाहिये।

लाभः-

१. अग्निसार से अग्निमांघ और कब्ज दूर होते हैं।
२. पित्त की कमी से होने वाली मन्दाग्नि आमाशय या आंतों के दुर्वल होने पर अग्निसार उनकी Tone को सुधारकर पुनः व्यवस्थित करता है। इस क्रिया के १ घंटे पश्चात पुनः भूख लगने लगती है।
३. अग्निसार से पेट में स्थित अंगों, अग्नाशय, आमाशय, यकृत, प्लीहा, गुर्दे एवम् आंतों पर दवाव पड़ने से इनके स्वास्थ्य में वृद्धि होती है। यकृत से पित्त का स्त्राव होकर पाचन वृद्धि और अग्न्याशय से उचित मात्रा में इन्सुलिन हार्मोन का स्त्राव होने से डायबिटीज दूर हो जाता है।

४. पेट में स्नायुओं में स्थित विजातीय तत्व अपना स्थान छोड़ देते हैं जिससे उदर वृद्धि, मोटापा का रोग दूर हो जाता है।

नौली :-

१. पैरों में १-१/२ फीट अन्तर रखकर खड़े हो जायें। हाथ घुटनों या जांघों पर रखकर थोड़ा आगे झुकें। घुटने भी थोड़ा आगे झुके रहेंगे। हाथों से घुटनों को दबायें। ठोड़ी छाती से लगी रहेगी।

२. श्वांस बाहर निकालकर थोड़ा आगे झुकें। हाथों से जंघा या घुटने पर कसकर दवाव दें। पार्श्वभाग से उदर को संकुचित करते हुये सामने वाली दोनों मांसपेशियों (नलों) को बाहर निकालने का प्रयास करें।

३. जब तक श्वांस बाहर रह सके इसी अवस्था में रहें। श्वांस लेते समय उदर को ढीला छोड़कर खड़े हो जायें। और ३-४ सामान्य श्वांस-प्रश्वांस लेकर पुनः दूसरा चक्र प्रारम्भ करें। ऐसे ३ चक्र करने पर्याप्त हैं।

(नौली क्रिया)

वाम नौली :- पूर्व की भांति खड़े होकर श्वांस बाहर निकालें और बांयें हाथ से जांघ को दबायें। कुछ बायी ओर झुकते हुये सारे शरीर का दबाव बायीं ओर रखिये। ऐसी स्थिति में बायां पैर कुछ टेढ़ा हो जायेगा इससे उदर की सामने वाली दोनों बड़ी पेशियों में बायीं पेशी आगे को निकल जायेगी परन्तु इस बात का विशेष ध्यान रखें कि इस सारी प्रक्रिया में उदर का दाहिना भाग ढीला रखें।

दक्षिण नौली :- वाम न्यौली की भांति श्वांस बाहर निकालकर शरीर का दवाब दाहिनी ओर करने पर दायीं पेशी बाहर निकल आयेगी और बायां भाग ढीला रहेगा।

नौली संचालन :- पहिले के तीनों अभ्यासों में दक्षता प्राप्त करने के बाद दायीं ओर से छड़ी की विपरीत दिशा में नौली संचालन

करें। इसकी ३ चक्र करने के बाद बायीं ओर से छड़ी की दिशा में न्यौली घुमायें। पहिले धीरे-धीरे बाद में शीघ्रता से अभ्यास करें।

लाभ :-

१. हठयोग प्रदीपिका में नौली को सब क्रियाओं में मूर्धन्य किया है - 'हठ क्रिया मौलिरियं च नौलिः'। मन्दाग्नि, कब्ज अतिसार, संग्रहनी, उदर का मोटापा इत्यादि रोग दूर करने पेट की सारी क्रिया को व्यवस्थित करती है।

२. इस क्रिया से आतों में स्थित मल गुदा की ओर सरकने लगता है। इस प्रकार नौली पुरानी कब्जियत का भी अमोघ इलाज है।

सावधानी :-

१. दुर्बल हृदय, रक्तचाप, उदर में फोड़ा आदि ग्रस्त रोगियों को नौली नहीं करनी चाहिये।

२. स्वस्थ शरीर वाले भी अधिक अभ्यास न करें।

३. नौली क्रिया मल मूत्र विसर्जन के पश्चात खाली पेट ही करनी चाहिये।

४. सगर्भावस्था वाली स्त्रियां भी इसका अभ्यास न करें।

बस्ती

गुदा द्वारा पानी ऊपर आकर्षित करके बड़ी आंतों को धोना बस्ती कर्म कहलाता है। इस क्रिया में दक्षता प्राप्त करने के लिये नौली मध्यमा, उडियान बंद और बाम-दक्ष-नौली संचालन का अभ्यास होना आवश्यक है।

विधि :- नाभि तक पानी आ जाये ऐसे स्वच्छ पानी में उडियान बंद क्रिया की भांति खड़े हो जायें। यह क्रिया किसी बड़े टब में पानी भरकर उत्कटासन में बैठकर भी की जा सकती है। इसके बाद मध्यम न्यौली करें जिससे पानी गुदा मार्ग से बड़ी आंत में चढने लगता है। जिस समय श्वांस छोड़ने की शक्ति पूर्ण हो जाये। अर्थात न्यौली छोड़ने की स्थिति में। उस समय गुदा द्वार बंद कर लें ताकि पानी बाहर न निकले। फिर से मध्यम न्यौली करें गुदा द्वार से उंगली हटा लें जिससे आंत में पानी दुबारा चढ़ने लगेगा। इस प्रकार ५-७ बार करने से आंत में पर्याप्त पानी चढ़ जाता है।

अन्त में पानी से बाहर आकर शौचालय में जाकर मल विसर्जन करें।

सावधानी :-

१. इस क्रिया को करने के लिये अनुभवी योग्य शिक्षक का मार्ग दर्शन आवश्यक है।

२. बस्ती प्रातः खाली पेट करनी चाहिये।

३. जो लोग न्यौली न कर सकते हों उन्हें बस्ती के लाभ लेने के लिये बड़ी आंत की सफाई एनीमा द्वारा कर लेनी चाहिये वर्तमान में वस्ती के स्थान पर एनीमा विधि ही प्रचिलित है।

४. इसे सप्ताह में अधिक से अधिक २ बार करना चाहिये।

लाभ :-

१. वस्ती क्रिया द्वारा बड़ी आंत में संचित मल निकल जाता है। जिससे कब्जियत दूर हो जाता है।

२. वस्ती से आंतें विशेष कार्यक्षम होती हैं।

एनीमा

यन्त्र द्वारा गुदा के मार्ग से बड़ी आंत में जल या औषधि का पहुंचना ही एनीमा कहलाता है। इसका पाचन संस्थान पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है।

एनीमा के प्रकार :- एनीमा ७ प्रकार का होता है-

१. परगेटिव एनीमा - मल त्याग जब स्वाभाविक रूप से नहीं होता है तब गरम जल में नीबू का रस डालकर एनीमा लेना बहुत लाभप्रद होता है।

२. एन्थल मेटिक एनीमा - इस का प्रयोग केवल उस समय किया जाता है जब आंतों में सूक्ष्म कृमि उत्पन्न हो गये हों। इसके लिये हाइपरटॉनिक घोल या क्वासा नामक औषधि के काढ़े का प्रयोग किया जाता है।

३. एस्ट्रिन्जेन्ट एनीमा - इसका प्रयोग प्रवाहिका, अतिसार, खून के दस्तों में किया जाता है ताकि वे रूक जायें। १०० ग्राम पानी में १० ग्राम फूली फिटकरी डाल दें और कपड़े से छानकर

एनीमा लें। (अगर औषधि की मात्रा तीव्र लगे तो सादा पानी की मात्रा बढ़ा दें)

४. सेडेटिव एनीमा :– इसका प्रयोग मलाशय या मल द्वार पर होने वाली तीव्र पीड़ा की शक्ति के लिये किया जाता है। बबासीर, भगन्द नामक रोगों में भी पीड़ा नाश के लिये इसका उपयोग किया जाता है। इसमें टिंचर ओवियम के साथ बबूल गोंद के घोल का प्रयोग किया जाता है। (इस एनीमा का प्रयोग रोगी बार-बार न करें)

५. एन्टीस्पैसमोडिक एनीमा :– आंतों के अन्तिम भाग में उत्पन्न हुये तीव्र शूल को दूर करने के लिये तारपीन का तेल, ईंग, ब्रोमाइड एस्प्रीन को गोंद के घोल में डालकर लेना चाहिये।

६. एमोलीएन्ट एनीमा :– इसका प्रयोग मलाशय में व्रण हो जाने के कारण तीव्र क्षोभ को शान्त करने के लिये किया जाता है। इस कार्य के लिये अलसी, जौ, गेहूं, मैदा की लेई सी बना लेनी चाहिये।

७. न्यूट्रीएन्ट एनीमा :– इसका प्रयोग उस समय होता है जबकि मुख द्वारा भोजन निकलना असंभव हो जाता है। या निकालने पर उल्टी हो जाती है। इसके लिये ग्लूकोज का घोल नॉरमल सेलाइन (सामान्य लवणीय) बनाकर अत्यन्त मंद गति से देना चाहिये। इसको देने से पूर्व गर्म जल से दस्त करा लेने चाहिये। (आमाशय में घाव हो जाने पर तथा दुर्बलता बढ़ जाने पर एनीमा द्वारा पहुंचाये हुये भुगतान में से आंतें इसे सोखकर शरीर में पहुंचा देती है।

शक्तिदायक एनीमा

साधारण ढंग और ताजा पानी या हल्का गुनगुना पानी पाव डेढ़ पाव के करीव आंत में चढ़ा लीजिये और इसे कम से कम ३० मिनिट तक रोके रखिये। और तब पाखाना चाहिये। पानी न ज्यादा गर्म हो न ज्यादा ठंडा इसका ध्यान रखिये। कुछ दिनों के प्रयोग के बाद यह पानी आंतों द्वारा सोख लिया जाता है और रक्त में मिलकर सारे शरीर में घूमता हुआ मूत्र के रूप में बाहर निकल जाता है। इस

एनीमा से आंतों को बल मिलता है और कब्ज स्थाई रूप से समाप्त हो जाता है। इसी लिये इसे टॉनिक एनीमा भी कहते है।

एनीमा लेने की विधि :-

१. एनीमा के बरतन को साफ करके उसमें पानी भरकर किसी ऊंची जगह पर लटका दें।

२. किसी तख्त या फर्श पर दाहिनी करवट लेट जाइये।

३. तख्त की दिशा में पैरों की तरफ १-१ ईंट दोनों पायों के नीचे लगा दीजिये। ताकि पैरों की ओर का शारीरिक अंग कुछ ऊंचा हो जाये। फर्श की दिशा में पीठ के पास कूल्हों के नीचे किसी तकिये का प्रयोग करें। ताकि पैरों वाला भाग कुछ ऊंचा हो जाये। पैरों को घुटने पर से मोड़ लीजिये।

४. एनीमा के यन्त्र की नली को पहिले खोल दीजिये ताकि कुछ पानी निकल जाये और उसकी कुछ हवा भी निकल जाये। फिर उसे बन्द कर दीजिये।

५. नली के मुंह पर सरसों का तेल लगाकर गुदा के अन्दर धीरे-धीरे १ १/२ - २ इंच तक सरका दें। फिर यंत्र की नली का मुख खोल दें जिससे पानी ऊपर चढ़ने लग जायेगा।

६. यदि पानी चढ़ते समय पेट में कुछ दर्द मालुम होने लगे तो नली को कुछ देर बंद कर देना चाहिये। दर्द मिट जाने के बाद ही दोबारा पानी चढ़ाना चाहिये।

७. पानी चढ़ाते समय पेट को धीरे-धीरे बायी ओर से दाहिनी ओर मलते रहना चाहिये। पूरा पानी चढ़ने के बाद नाली को बाहर निकाल दें।

८. पानी को कुछ देर पेट में रोकने का अभ्यास करना चाहिये। ताकि मल फूल जाये और एनीमा की आदत न लगे।

९. टट्टी जाते समय पेट को दाहिनी ओर से बायी ओर को मलते रहना चाहिये। ताकि पेट पूरी तरह साफ हो जाये। ध्यान रहे शौचालय का प्रबंध रोगी के पास ही होना चाहिये।

१. एनीमा में जल का परिमाप :- एनीमा लेते समय जल के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

१. जल का परिमाण २. जल का ताम

३. जल में मिलाप

जल का परिमाण :- एनीमा में जल का परिमाण आयु के अनुसार होना चाहिये। जैसे - साल भर के बच्चे के लिये २०० ग्राम, ५ साल के बच्चे के लिये ४०० ग्राम, १५ साल तक के लिये १ किग्रा, २५ साल के लिये २ किग्रा तथा अधिक आयु वालों के लिये ४ किग्रा। ध्यान रहे जल की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिये।

जल का ताप :- जल को शरीर की गर्मी के अनुकूल गर्म रखना चाहिये। गर्म जल मल को फुलाकर बाहर लाता है। रोगों में पहिले सुहाते हुये जल का प्रयोग ही लाभदायक होता है। गरमियों में ठंडा जल ले सकते हैं। ठंडा जल नाड़ी में काम करने की शक्ति पैदा करता है परन्तु जल अधिक ठंडा नहीं होना चाहिये क्योंकि यह मरोड़ पैदा करता है।

जल में मिलाप :-

१. जल में साबुन आदि कुछ भी नहीं मिलाना चाहिये।
२. कभी-कभी १-२ कागजी नीबुओं का रस कपड़े से छानकर मिलाया जा सकता है।
३. बड़ी आयु बालों को जिन्हें ऑव की शिकायत है नमक कपड़े की पोटली में बांधकर जल में घोलना चाहिये।

सावधानी :-

१. कब्ज की दशा में कब्ज टूटने तक एनीमा लेते रहना चाहिये।
२. पुराने रोगों में ३-४ सप्ताह तक फलाहार और शाकाहार तथा बीच-बीच में उपवास भी रखना चाहिये।

   उपवास के साथ-साथ एनीमा बहुत हितकारी होता है। ऐसी दशा में २-४ दिन गर्म जल का एनीमा ५-६ दिन गुनगुने जल का और फिर १०-१२ दिन ठंडे जल का एनीमा रोगों को जड़ से उड़ा देता है।
३. नये रोगों की दशा में और उपवास के दिनों में सुहाते हुये गर्म पानी का एनीमा नहीं लेना चाहिये।
४. (अ) दस्तों में एनीमा नहीं लेना चाहिये। (ब) एनीमा के पश्चात १०-१० मिनट तक आराम करना चाहिये। (स) एनीमा के पश्चात् किसी भी तरीके का स्नान नहीं करना चाहिये (द) यदि

दुर्बलता महसूस हो तो फलों का रस लेना चाहिये।

५. एनीमा को छोड़ देने पर प्रायः १-२ दिन टट्टी नहीं आती इससे घबराना नहीं चाहिये।
६. १-२ दिन एनीमा लेकर फिर छोड़ देना चाहिये।
७. टट्टी जाते समय पेट को धीरे-धीरे दाहिनी ओर से बायीं ओर मलते रहना चाहिये (अ) किसी-किसी को दो-दो बार टट्टी जाने पर पेट साफ होता है। इसमें कोई चिन्ता की बात नहीं है। (ब) किसी-किसी का मल आंतों में अटक जाने के कारण बहुत सूख जाता है ऐसी दशा में गर्म जल का एनीमा देना चाहिये और उसमें १ किग्रा पानी में ५० ग्राम जैतून या नारियल का तेल मिला देना चाहिये।
८. (अ) लगातार ८-९ महीने तक गर्म जल का प्रयोग करने से एनीमा की आदत पड़ जाती है अतः लगातार गर्म जल का एनीमा नहीं लेना चाहिये। (ब) जल को पेट में नहीं रोकने का अभ्यास करने से भी एनीमा की आदत पड़ जाती है।

एनीमा से उत्पन्न होने वाली शक्तियाँ :-

एनीमा से तीन प्रकार की शक्तियाँ पैदा होती हैं -

१. शरीर में गर्मी पैदा करता है - ऐसे रोगी को जिसके हाथ-पैर ठंडे हो रहे हों उसे १२ छटांक सुहाते पानी का एनीमा दे दिया जाये और उसके साथ-साथ तलुवों और छाती को गर्म पानी से सिकाई की जाये तो उसके शरीर में फिर गर्मी आ जायेगी।
२. शरीर में शक्ति पैदा करता है - विधि- (अ) सेर डेढ़ सेर ठंडे पानी का एनीमा प्रतिदिन १५ दिन तक लेते रहें। (ब) ५-७ मिनिट २० मिनिट तक जल अन्दर रोकना चाहिये। (स) भोजन का क्रम नियमानुकूल रखना चाहिये।

लाभ :- इससे स्वास्थ्य में सुधार आता है कब्ज दूर हो जाती है तथा एनीमा की फिर आवश्यकता नहीं रहती।

३. पुरानी कब्ज को तोड़ता है :- (अ) पहिले २ दिन सुहाते हुये गर्म जल का एनीमा लें फिर २ दिन पश्चात् ठंडे जल का एनीमा लेकर टट्टी जाये। (ब) यथा शक्ति जल को अंदर ही

रोकना चाहिये। (स) जल की मात्रा दोनों दशाओं में ८-८ छटांक से डेढ़ सेर तक यथा शक्ति रखनी चाहिये।

एनीमा के लाभ :- एनीमा से निम्नलिखित प्रमुख लाभ है-

१. बिना किसी प्रकार की उत्तेजना और जलन के आंत की सफाई हो जाती है और शरीर भी स्वस्थ हो जाता है।

२. गर्म पानी से आंतों के अन्दर का मल फूलता और ठंडे पानी से आंतों के अन्दर काम करने की शक्ति प्राप्त होती है।

एनीमा के अभाव में बड़ी आंतों की सफाई -

सनाय का काढ़ा - सामग्री - सनाय की पत्ती २० ग्राम मुनक्का १२ नग

विधि - २५० ग्राम पानी में सनाय की पत्ती और मुनक्का डालकर आग पर गर्म कीजिये। जब पानी १०० ग्राम शेष रहे तब उसे छानकर सोते समय रात को पी लें। ५-६ घंटे पश्चात् प्रातः १-२ दस्त खुलकर होंगे और बड़ी आंत की सफाई भी अच्छी प्रकार हो जायेगी परन्तु महीने में २ बार से अधिक इसका सेवन नहीं कसा चाहिये।

त्राटक

विधि :-

१. ध्यानात्मक आसन में एकान्त और शान्त स्थान में दीवार से ३-४ फुट के अन्तर पर बैठिए।

२. सरसों के तेल या देशी घी का दीपक जलाकर उसे तीन फुट भी दूरी पर आँखों की सीध में रखिए। दीपक को ऐसे स्थान पर रखें जहाँ वायु न लगे।
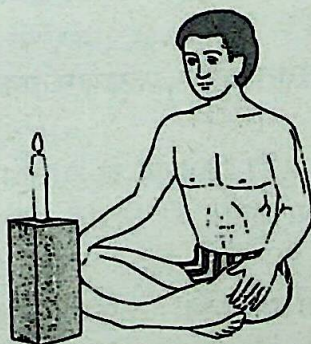
(त्राटक)

३. अब बिना पलक झपकाये दीपक की लौ को निरन्तर देखिए।
४. जब आँखों से अनुपात या आँखों में जलन होने लगे तब देखना बन्द कर दीजिए। शान्त आँखें बन्द कर के दीपक की लौ को मन से देखें इसे मानसिक त्राटक कहते हैं।

यही क्रिया एक सुन्दर से कागज पर एक रूपये के आकार का चमकीले काले रंग से एक बिन्दु बनायें तथा पूर्ववत् त्राटक करें। इसी प्रकार चन्द्रमा आदि पर भी त्राटक किया जा सकता है।

सावधानी :-

१. यदि त्राटक ठीक ढंग से नहीं किया जाये तो हानि प्रद होता है। अतः पहले किसी योग्य गुरू के दिशा निर्देश में ही प्रारम्भ करना चाहिए।
२. ध्यान रहे दीपक या मोमबत्ती आदि ज्योति पर त्राटक करते समय लौ हिलनी नहीं चाहिए। तथा कमरे में अँधेरा होना भी बहुत जरूरी है।

लाभ :- त्रांटक से आँखें सुदृढ़ और दृष्टि तेजस्वी बनती है। परोक्षतः त्राटक से मस्तिष्क और मन पर शुभ प्रभाव होता है। मन भी चंचलता दूर होती है तथा एकाग्रता बढ़ती है। मानसिक तनाव तथा डिप्रेशन से मुक्ति मिलती है। सांयकाल दीपक पर त्राटक करने से नींद अच्छी आती है तथा स्वप्न नहीं आते।

६. कपालभाति

कपालभांति अर्थात् कपाल, खोंपडी और मस्तिष्क को तेजस्वी बनाने की क्रिया है।

इसका पूरा विस्तृत वर्णन प्राणायाम प्रकरण में दिया जा रहा है, अतः वहीं देखें।

इन षट्कर्म या शुद्धि क्रियाओं से स्थूलता, कफ, मेद एवं अन्य कुपित दोषों (विजातीय तत्वों) की निवृत्ति होकर प्राणायाम में अति शीघ्र सफलता मिलती है। जैसा की हठयोग प्रदीपिका में लिखा है–

"षट्कर्म निर्गतस्थौल्यः कफदोषमलाधिकः।
प्राणायामं ततः कुर्यादनायासेन सिध्यति।।

ह० प्र० २/३६

अध्याय २

रोगानुसार योगासनों का वर्गीकरण

१. मोटापा :- योगमुद्रा, पश्चिमोत्तानासन, धनुरासन, अश्वासन, हलासन, उत्तान पादासन, पवनमुक्तासन, नौकासन, शलभासन, एकपादवृत्तासन, पार्श्वो-तानपादसन नं० १ तथा नं० २, उदरामृत क्रिया, लोम-विलोम, कपालभाति, अग्निसार प्राणायाम।

२. कमरदर्द :- अश्वासन, धनुरासन, उष्ट्रासन, भुजंगासन, सुप्तवज्रासन, सेतुबन्ध, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, चक्रासन।

३. सिर दर्द :- जलनेति, नाड़ी शोधन, शवासन।

४. अनिद्रा :- योगमुद्रा, शीर्षासन, हलासन, सर्वांगासन, शवासन।

५. कब्ज :- अश्वासन, चक्रासन, पश्चिमोत्तान, हलासन, शलभासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, मयूरासन, योगमुद्रा, नौली क्रिया, अग्निसार क्रिया, कपालभाति प्राणाायम।

६. बवासीर :- अश्वासन, योगमुद्रा, मूलबन्ध, मत्स्यासन, उत्तानपादासन, सर्वागासन, परिश्चमोत्तानासन।

७. अजीर्ण-बदहजमी :- मयूरासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, मत्स्यासन, सर्वांगासन, योगमुद्रा, भुजंगायन, नौकासन, धनुरासन।

८. गैस :- वज्रासन, पवनमुक्तासन, योगमुद्रा, सर्वांगासन, उष्ट्रासन, मयूरासन, धनुरासन।

९. नेत्र रोग :- सर्वांगासन, उष्ट्रासन, चक्ष व्यायाम।

१०. वीर्य दोष :- पद्मासन, योगमुद्रा, बज्रासन, सर्वागासन, धनुरासन, पाश्चिमोत्तानासन, कटिक्रासन, लोम-विलोम नाड़ी शोधन, प्राणायाम, कपालभाति, अग्निसार।

११. मन्दाग्नि :- मयूरासन, पश्चिमोत्तान, शलभासन,

भुजंगासन, वज्रासन, मत्स्यासन, सर्वांगासान, उष्ट्रासन। अग्निसार क्रिया।

१२. जुकाम :- जलनेति, मत्स्यासन, सर्वागासन, हलासन, दीर्घश्वास-प्रश्वास, कपालभांति, अग्निसार तथा नाड़ी शोधन।

१३. दमा :- नेति, कुंजल क्रिया, सुप्तवज्रासन, मत्स्यासन, सर्वांगासन, हलासन, भुजंगासन, नाड़ी शोधन, कपालभांति प्राणायाम कम से कम १०० बार दीर्घ श्वास-प्रश्वास।

१४. मधुमेह :- अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, मण्डूकासन, कूर्मासन, एक पाद वृत्तासन, मयूरासन, भुजंगासन, धनुरासन, नौकासन, पश्चिमोत्तानासन, कपालभांति ५००-५०० का तीन चक्र, अग्निसार प्राणायाम तथा लोमविलोम प्राणायाम। कम से कम ४-५ किलोमीटर की पूरी चाल से बिना बातचीत के भ्रमण।

१५. नाभिटलना :- उत्तानपादासन, धनुरासन, नौकासन, भुजंगासन, अश्वासन, शलभासन, चक्रासन, सर्वांगासन।

१६. सूजन :- सर्वांगासन, मत्स्यासन, उत्कटासन, उत्तानपादासन

नमक छोड़कर पुनर्नवारिष्ट को सुबह-शाम दो बार भोजन के बाद तीन-तीन चम्मच दवा आधे कप पानी में डालकर सेवन करें।

१७. हृदय रोग :- शवासन, कटिचक्रासन, उत्तानपादासन, गौमुखासन, शलभासन, भुजंगासन, ताडासन, दीर्घश्वास-प्रश्वास, नाडी शोधन प्राणायाम बिना कुम्भक के।

१८. गला :- सर्वांगासन, हलासन, मत्स्यासन, सुप्तवज्रासन, भुजंगासन, उष्ट्रासन, ग्रीवा चक्र, सिंहासन, ग्रीवा संचालन, ताड़ासन।

१६. यकृत :- भुजंगासन, पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, योगमुद्रा, शलाभासन, हलासन, उदरामृत क्रिया, नाड़ी शोधन, कपालभाति, अग्निसार प्राणायाम।

२०. आमवात :- पद्मासन, पश्चिमोत्तान, अर्द्धमत्स्येन्द्र, मयूरासन, उष्ट्रासन, सर्वांगासन। नाड़ी शोधन तथा कपालभांति, अग्निसार प्राणायाम।

२१. खाँसी :- सर्वागासन, मत्स्यासन, सुप्तवज्रासन, सिंहासन,

नाड़ीशोधन, कपालभांति, अग्निसार।

२२. कृमि :– चक्रासन, अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन, पश्चिमोत्तानासन, मयूरासन, सर्वांगासन, उदरामृत क्रिया, पार्श्वोत्तानपाद एवं पादप्रहारासन

२३. गर्भाशय दोष :– सर्वांगासन, हलासन, उत्तानपादासन, एक पादवृत्तासन, पार्श्वोत्तानपाद तथा पादप्रहारासन, उदरामृत क्रिया।

२४. सवाईकल व स्लिप डिस्क :– भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, सुप्तवज्रासन, गोमुखासन, पार्श्वोत्तानपाद, पादप्रहारासन, अर्धमत्स्येन्द्रासन, ताडासन, उष्ट्रासन तथा मकरासन। ग्रीवाचक्र, कटिचक्र एवं कन्धा संचालन की क्रियाऐं।

२५. फेफडे :– वज्रासन, मत्स्यासन, सर्वांगासन, गौमुखासन, अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन, उष्ट्रासन, पार्श्वोत्तानपाद एवं पाद प्रहारासन, उदरामृत क्रिया।

२६. गठिया :– टखने के व्यायाम, घुटने के व्यायाम, हॉफ बटर फ्लाई, फुल बटर फ्लाई, नी रोटेशन, चेयरपोजीशन, पवन मुक्तासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, उष्ट्रासन, सुप्ततानासन, पश्चिमोत्तानासन।

२७. हर्निया :– सर्वांगासन, मत्स्यासन, गौमुखासन, गरुड़ासन, पवनमुक्त, पश्चिमोत्तान, उत्तानपाद, पार्श्वोत्तानपाद तथा पादप्रहारासन। अश्विनीमुद्रा एवं मूलबन्ध।

२८. हल्का पेट दर्द :– पवन मुक्तासन, योगमुद्रा, सर्वांगासन, धनुरासन, सिंहासन, अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन, पद्मासन, वज्रासन।

२६. मासिक धर्म :– मेहन स्नान, मत्स्यासन, सुप्तवज्रासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन।

३०. बाल सफेद :– जलनेति, सर्वांगासन, कफ प्रकृतिवाला रोग शीर्षासन, मत्स्यासन।

३१. बौनापन :– ताड़ासन, चक्रासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तासन, उष्ट्रासन, सर्वांगासन, त्रिकोणासन, हलासन, भुजंगासन।

३२. शारीरिक थकान :– अश्वासन, शवासन, मकरासन, धनुरासन।

३३. तिल्ली प्लीहा :- सर्वांगासन, हलासन, मयूरासन, बद्ध पद्मासन, पार्श्वोत्तानपादासन, पादप्रहारासन, उदरामृत क्रिया। नाड़ी शोधन प्राणायाण, कपालभाति तथा अग्निसार।

३४. पाण्डु (पीलिया) :- पार्श्वोत्तानपाद, पादप्रहारासन, उदरामृत क्रिया, भुजंगासन, वज्रासन, सर्वांगासन, हलासन, मयूरासन, उष्ट्रासन, नाड़ी शोधन, कपाल भाति तथा अग्निसार।

३५. घुटने का दर्द :- वज्रासन, भूनमनासन, उत्तानपादासन, गरुड़ासन, उत्कटासन, सर्वांगासन में पाद संचालन।

३६. तनाव में :- अश्वासन, सुप्तवज्रासन, हलासन, धनुरासन, पवनमुक्तासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, शवासन।

३७. पौरुष ग्रन्थि :- योगमुद्रा, पश्चिमोत्तानासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, सुप्तवज्रासन, हलासन, सिंहासन, मण्डूकासन, नाड़ी शोधन, कपालभाति तथा अग्निसार।

३८. वृक्क विकार :- अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, मण्डूकासन, कूर्मासन, पार्श्वोत्तानपाद, पादप्रहारासन, उदरामृत क्रिया।

३९. कुष्ठ रोग :- सर्वांगासन, पद्मासन, सिद्धासन, सिंहासन, गोमुखासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, मण्डूकासन, नाड़ी शोधन, कपाल भाति, अग्निसार, दीर्घश्वास-प्रश्वास क्रिया।

४०. साइटिका :- वज्रासन, पद्मासन, ताड़ासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, उत्कटासन, उत्तानपादासन, धनुरासन, बैठकर की जाने वाली सूक्ष्म क्रियाऐं।

***प्रश्न* - किस आसन के बाद कौनसा आसन करना चाहिए?**

***उत्तर* -**

आसन		उपासन
उत्तानपादासन	-	पवन मुक्तासन
चक्रासन	-	पश्चिमोत्तानासन
पश्चिमोत्तानासन	-	धनुरासन
मयूरासन	-	उष्ट्रासन
हलासन तथा सर्वांगासन	-	मत्स्यासन
शीर्षासन	-	ताड़ासन
वज्रासन	-	सुप्तवज्रासन

प्रश्न - कौनसा आसन कौन रोगी न करें?

उत्तर - आसन रोग

आसन	रोग
सूर्यनमस्कार -	उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, हर्निया।
भुजंगासन -	हर्निया
पश्चिमोत्तानासन-	हर्निया, अपेन्डिसाईटिस।
सर्वांगासन -	उच्च रक्तचाप, हृदय रोग।
हलासन -	उच्च रक्तचाप, हृदय रोग।
धनुरासन -	उच्च रक्तचाप, हृदय रोग।
योगमुद्रा -	हर्निया, अपेन्डिसाईटिस, कमर दर्द।
शीर्षासन -	उच्च रक्त चाप, हृदय रोग, आँख, कान के रोग संग्रहणी, सिर दर्द तथा पित्त प्रधान व्यक्ति को शीर्षासन नहीं करना चाहिए।

नोटः- वैसे देखा गया है कि शीर्षासन केवल कफ प्रधान रोगी के लिए वरदान सिद्ध होता है, वात प्रधान व्यक्ति को लाभ हानि दोनों नहीं करता तथा पित्त प्रधान व्यक्ति का सबसे बड़ा दुश्मन माना जाता है।

अतः हम शीर्षासन का प्रशिक्षण नहीं देते, न ही करने का सुझाव देते हैं।

विशेष :- कमर दर्द सम्बन्धि रोगी को आगे की ओर झुकने वाले कोई भी आसन नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार पेट सम्बन्धि रोगी पीछे झुकने वाले आसन न करें।

अध्याय ३

बैठ कर किये जाने वाले सूक्ष्म व्यायाम व आसन

(अ) टखने के व्यायाम :-

१. पैर मिलाकर सीधे बैठ जायें। कमर से लेकर सिर तक का भाग एक सरल रेखा में हो और हाथ हथेलियों के बल जमीन पर टिका दें।
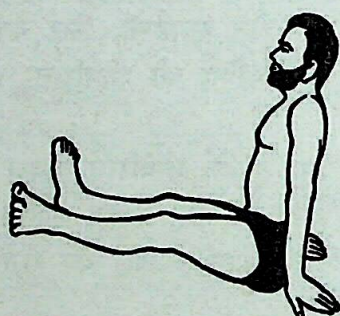
अपना पूरा ध्यान पैरों की उंगलियों पर टिकाते हुये पैरों की उंगलियों को ही १०-१५ बार आगे-पीछे-२ कीजिये।

२. श्वांस भरकर १०-१५ बार पूरा पंजा आगे-पीछे करें। घुटने धरती के साथ लगे रहेगें।

३. श्वांस भरकर दोनों पंजों को अपनी ओर खींचे। दोनों एडी आधा इंच ऊपर की ओर उठ जायेगी। घुटना धरती के साथ लगा रहेगा। कम से कम १० सैकिण्ड रूकने के बाद अपनी पूर्व स्थिति में आ जायें। ऐसा ५ बार करें।

४. इसके बाद टखने को दाहिनी ओर से बायीं ओर तथा बायीं ओर से दाहिनी ओर चक्राकार के रूप में घुमायें। इसे भी दोनों ओर से ५-५ बार करें।

५. दोनों पैरों को १ फुट के अन्तर पर रखते हुये धरती पर दोनों अंगुठों को आपस में मिलायें। ऐसा १०-१५ बार करने के बाद दोनों पंजों को अलग-अलग गोल चक्रों में घुमायें।

घुटने का व्यायाम :-

१. पैर फैलाकर सीधे बैठ जाये। दोनों पैरों की एड़ी व पंजे आपस में मिले रहें। हथेलियां जमीन पर टिकी हुई तथा गर्दन व सिर सीधा रहे। अब श्वांस भरते हुये पहिले बायें घुटने को धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठायें। १० सैकिण्ड रूकने के बाद श्वांस छोड़ते हुये धीरे-धीरे नीचे की ओर ले जायें। इसी प्रकार दाहिनी घुटने को भी ऊपर उठायें। दोनों घुटनों को कम से कम १०-१० बार ऊपर उठायें।

२. बायें पैर को ऊपर उठाकर घुटने से नीचे जांघ की तरफ से दोनों हाथों से पकड़ लें। श्वांस सामान्य रखते हुये बायें पैर को
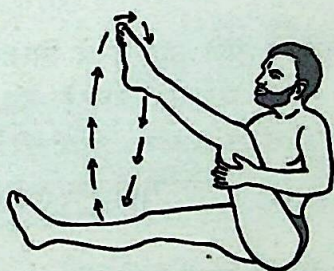
घुटने से ऊपर ५-५ बार गोलाकार घुमायें। इसी प्रकार दाहिनी ओर से भी करें।

३. सीधे बैठकर पैर आगे की ओर फैलायें। बायें पैर को घुटने से मोड़ कर दाहिनी जांघ पर रखें। दोनों हाथों से बायें घुटने को पकड़कर गोलाकार दायें-बायें ५-५ बार घुमायें इसके बाद बायें घुटने को एक बार नीचे धरती से तथा दूसरी बार ऊपर सीने से
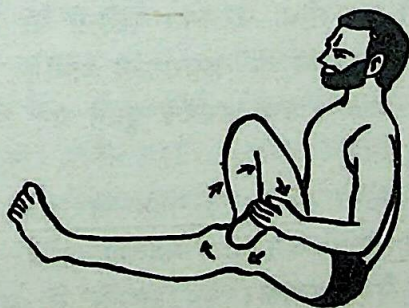
लगायें। कम से कम १० बार करें। इसी प्रकार दाहिने पैर से भी करें।

४. फुल वटर फ्लाई :-
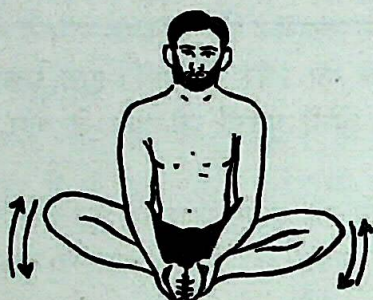
(अ) दोनों पैरों के पंजे आपस में मिलाकर सामने रखें। पंजों को शरीर के पास रखने का प्रयास करें।

(ब) पंजों को हाथ से बांधकर हाथ की कोहनियों से जोर देते हुये धीरे-धीरे पैर के घुटने को भूमि के करीव ले जाने का प्रयास करें।

(स) दोनों पंजों को बिना हाथ की सहायता के मिलाकर हाथों से दोनों घुटनों पर दबाव डालें। प्रयास करें कि दोनों घुटने भूमि के करीव आ जायें। ध्यान रहे कि इसके लिये अधिक जोर न डालें।

(द) अब हाथ को ढ़ीला छोड़कर घुटनों को फिर से ऊपर आने दें। और वही प्रक्रिया पुनः शुरू करें। इस व्यायाम को प्रतिदिन २० बार करें।

(अगला आसन)

(अ) पैरों को सीधा फैलायें। दाहिना पैर इस तरह मोड़े कि उसका तलवा बायीं जांघ के ऊपर आ जाये।

(ब) अब दाहिना हाथ दाहिने घुटने पर रखें तथा बांया हाथ वायें घुटने पर रखें।

(स) अब दोनों हाथों की मदद से टखने पर दबाब डालते हुये गोलाकार में टखने को कुछ मालिश करें।

(द) अब पैर खोलकर पूर्व स्थिति में आ जायें और इसी

प्रक्रिया को बायें पैर से भी दोहरायें।

लाभ :- इन सभी सूक्ष्म व्यायामों को लगातार करने से घुटनों समेत शरीर के सभी जोड़ों पर लचक आ जाती है जिससे जोड़ों का दर्द, सूजन आदि नहीं होता। बैठ कर किये जाने वाले सभी सूक्ष्म व्यायामों से गठिया जैसा भंयकर रोग भी ठीक हो जाता है।

३. बैठ कर किये जाने वाले आसन :-

१. पश्चिमोत्तान आसन :- इस आसन के करने से शरीर के पश्चिम भाग अर्थात पीठ के भाग में उत्तान अर्थात खिंचाव पड़ता है इसीलिये इसे पश्चिमोत्तान आसन कहते हैं।
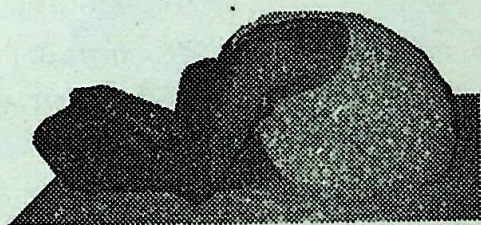
(पश्चिमोत्तान आसन)

विधि :- १. भूमि पर बैठकर दोनों पैरों को सामने की ओर फैलायें। एड़ी, पंजे मिले हुये रहें। घुटना धरती के साथ लगा रहे। श्वांस भरकर दोनों हाथ ऊपर की ओर उठायें। हाथ कान से लगे हुये बिल्कुल सीधे रहें। अब श्वांस छोड़ते हुये कमर से धीरे-धीरे नीचे झुकने का प्रयत्न करें। जहां तक आसानी से झुक सकें वहीं तक झुकें। फिर श्वांस भरते हुये ऊपर की ओर आ जायें। १०-१५ बार यही क्रिया करें।

२. श्वांस भरकर दोनों हाथों को ऊपर की ओर खीचें। श्वांस छोड़ते हुये पेट को अन्दर की ओर खींचते हुये कमर से धीरे-धीरे नीचे झुकें। दोनों हाथों से दोनों पैरों के अंगूठे पकड़ लें। सिर को घुटने से लगाने का प्रयास करें। इस समय सिर दोनों हाथों के बीच में रहेगा तथा घुटने धरती के साथ लगे रहेंगे। कम से कम १० सैकिण्ड रूकने के बाद धीरे-धीरे श्वांस भरते हुये ऊपर उठकर

अपनी मूल स्थिति में आ जायें। इसी प्रकार ५-६ चक्र इस आसन के करने चाहिये।

सावधानी -

१. इस आसन में घुटने ऊपर न उठें इस बात का विशेष ध्यान दें।

२. प्रारम्भ में सिर घुटने से नहीं लगेगा इसके लिये अधिक जोर न लगायें आसानी से जहां तक झुक सकते हैं वहीं तक झुकें।

३. जिनके कन्धे या कमर में दर्द है ऐसे लोगों को यह आसन नहीं करना चाहिये। गर्भवती स्त्रियां या जिनका बड़ा ऑपरेशन हुआ है ऐसी स्त्रियों को भी यह आसन नहीं करना चाहिये।

लाभ :-

१. यह एक बड़ा ही लाभकारी आसन है। इससे प्राणवायु सुषुम्ना नाड़ी में अतिशीघ्र प्रविष्ट होता है जिससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है तथा साधना में प्रगति होती है।

२. इस आसन पेट के ऊपर जमी चर्बी हट जाती है जिससे निकला हुआ पेट अंदर हो जाता है।

३. इस आसन से मूत्राशय, जठर, पित्ताशय आदि पेट के अवयव क्रियाशील बनते हैं।

४. इसके करने से आंतों को विशेष गतिशीलता मिलती है। जिससे भोजन आंत में एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचता है।

५. यह आसन कब्ज, रीढ़, कलेजे के दर्द, मंदाग्नि आदि रोगों को दूर करता है।

६. इस आसन के नियमित अभ्यास से शरीर सुडौल एवम् गठीला बनता है। जिससे भविष्य में कभी भी स्लिपडिस्क तथा सरवाइकल स्पन्डोलाइसिस का दर्द नहीं होता।

७. इसके करने से पैर के स्नायु सशक्त एवम् सारा शरीर लचीला बन जाता है (रबड़ जैसी कोमलता)

८. इस आसन के करने से हिक्का रोग भी मिट जाता है।

२. जानु शिरासन :-

विधि :- पूर्व की भांति भूमि पर पैर फैलाकर बैठ जायें।

बायें पैर को मोड़कर बायें पैर की एड़ी को कृषण और गुदा के बीच के भाग में दबाकर रखें। दांया पैर लम्बा और सीधा रहेगा। दोनों हाथ दायें पैर के घुटने पर रखें। अब श्वांस भरते हुये दोनों हाथों को ऊपर की ओर उठायें। श्वांस छोड़ते हुये पेट के भीतरी भाग को अन्दर की ओर खींचते हुये धीरे-धीरे नीचे झुकें दोनों हाथों से दायें पैर के पंजे को पकड़ लें। तथा मस्तक को घुटने से लगाने का प्रयत्न करें। १० सैकिण्ड तक इस स्थिति में रूकने के बाद अपनी मूल स्थिति में वापिस आ जायें। इसी प्रकार दायें पैर को मोड़कर दूसरी तरफ से भी करें। इस आसन के भी ५-६ चक्र करने चाहिये।
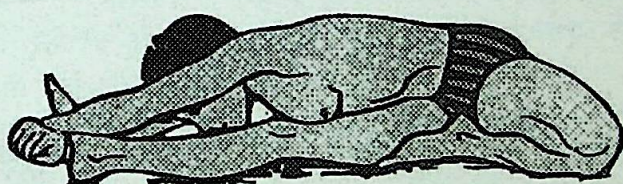
(जानु शिरासन)

सावधानी :- पूर्ववत।

लाभ :-

१. पाचक रस के स्त्राव में वृद्धि करता है।

२. बढ़ी हुई तोंद इसके निरंतर अभ्यास से अंदर चली जाती है।

३. मूत्र संबंधी विकार दूर हो जाते हैं।

४. यह आसन आंतों की पीड़ा में भी अत्यन्त उपयोगी साबित हुआ है।

५. ऐसा माना जाता है कि इस आसन के लम्बे अभ्यास से प्राणोत्थान की क्रिया अतिशीघ्र होती है। अतः साधकों को विशेष रूप से इसका अभ्यास करना चाहिये।

३. अर्द्धमत्स्येन्द्र आसन :-

योगी मत्स्येन्द्र नाथ ने इस आसन को सर्वप्रथम किया था इसीलिये इसे मत्स्येन्द्र आसन कहते हैं। पूर्ण मत्स्येन्द्र आसन बहुत की कठिन है अतः अर्द्ध मत्स्येन्द्र आसन चिकित्सा की दृष्टि से

अति महत्वपूर्ण एवं सरल है। इसी का अभ्यास नीचे दिया जा रहा है।
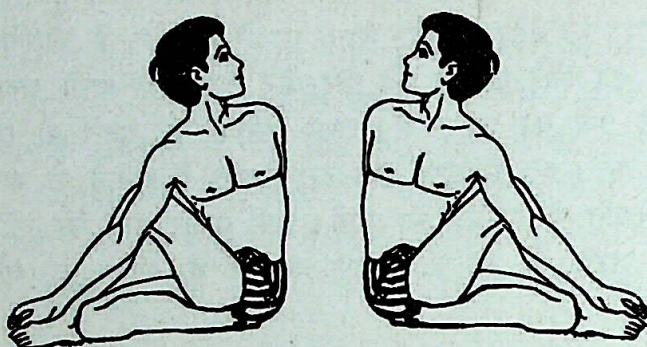
(अर्द्धमत्स्येन्द्र आसन)

विधि :-

(अ) आसन पर बैठकर दोनों पैर सीधे और दोनों घुटने, एड़ी, पंजे मिले हुये रखें। कमर सीधी दृष्टि सामने रखें।

(ब) बांया पैर मोड़ कर उसकी एड़ी सीवन प्रदेश (मल-मूत्रेन्द्रिय के बीच का स्थान) पर लगायें। पैर का तलवा दायीं जांघ से लगाकर घुटना भूमि पर टिका हुआ रहेगा।

(स) अब दायें पैर को मोड़कर बायें घुटने के बाहर की ओर रखें। पैर का पंजा धरती से लगा रहे तथा घुटना ऊपर आकाश की ओर उठा रहे।

(द) बांये हाथ का कंधा दायें पैर के उठे हुये घुटने को बाहर लगाकर दायें पैर का अंगूठा पकड़ें।

(य) अब दायें को कमर के पीछे की ओर ले जाकर बायीं जांघ के मूल से लगा दें। इसी प्रकार गरदन को भी अधिक से अधिक दायीं ओर मोड़े, इतना मोड़े कि गरदन दायें कंधे की सीध में आ जायें।

(र) १५ सैकिण्ड से १ मिनिट तक इस स्थिति में रहने के बाद क्रमशः गरदन, बांया हाथ, बांया पैर, दांया हाथ वापस लाकर पूर्व मूल स्थिति में आ जायें।

इसी प्रकार दायां पैर मोड़कर दूसरी ओर से भी यही अभ्यास कीजिये।

सावधानी :-

(अ) पैर की एड़ी सीवन प्रदेश में ही लगी रहनी चाहिये। कुछ लोग नितम्बों के नीचे लगाते हैं यह ठीक नहीं।

(ब) घुटनों के आगे हाथ को सावधानी से लगाकर जितना सहन हो सके उतना ही दवाव डालना चाहिये क्योंकि अधिक दवाव डालने से कोहनी पर से हाथ टूट भी सकता है।

(स) इस अभ्यास को दोनों ओर से १ मिनिट से ३ मिनिट तक करना ही पर्याप्त माना जाता है।

लाभ :-

(अ) यह आसन जठराग्नि को प्रदीप्त करके भूख को बढ़ाता है। इस आसन से कटि विकार दूर होता है। तथा उदर की मांसपेशियां खिंचकर आंतों को बल मिलता है।

(ब) इस आसन से मेरूदण्ड से निकलने वाली ३१ नाड़ियों में अधिक रक्त संचार होकर उन्हें सक्रिय बनाता है।

(स) इस आसन से पेन क्रियाज सक्रिय हो जाता है जिससे इन्सुलिन प्राकृतिक रूप से बनने लगता है। जिससे मधुमेह (डायबिटीज) दूर हो जाता है।

४. वक्रासन :-

जो लोग अर्द्धमत्स्येन्द्रासन को नहीं कर सकते उन्हें अर्द्धमत्स्येन्द्रासन का पूरा लाभ लेने के लिये वक्रासन का अभ्यास करना चाहिये। इस आसन में शरीर का ऊपरी हिस्सा पूरी तरह से वक्र अर्थात टेढ़ा हो जाता है। और ऐसा करते हुये मेरूदण्ड तथा हाथ, पैर, पीठ और पेट के स्नायुओं को तनाव दिया जाता है।
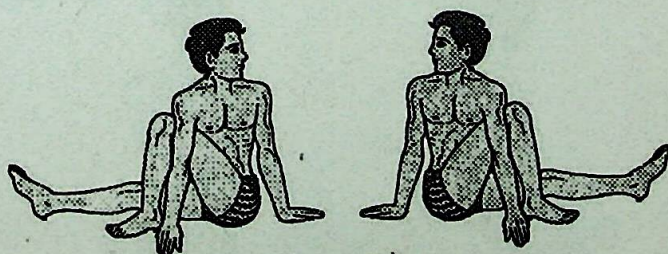
(वक्रासन)

विधि :-

(अ) अर्धमत्स्येन्द्रासन की तरह लम्बी स्थिति में ही बैठिये।

(ब) दाहिना पैर मोड़कर बायें पैर के घुटने के पास स्थित करें। पैर का पंजा पूर्णतया धरती पर टिका रहेगा। घुटना आकाश की ओर सीधा रहेगा। बायें पैर को सीधा रखते हुये पंजे को सामने की ओर ताने रखें।

(स) अब बांया हाथ दाहिनी घुटने के बाहर से लगाकर हथेली को दायें पैर के पंजे के साथ भूमि पर टिका दें।

(द) दाहिना हाथ कमर के पीछे सीधा भूमि पर टिकाकर रखें। अब गर्दन को दाहिनी ओर मोड़ें। पूर्ण स्थिति में बांया पैर दोनों कंधे गर्दन तथा दाहिना हाथ एक सरल रेखा में आ जायेंगे। शरीर का सारा भार दोनों नितम्बों पर पड़ेगा। इसी प्रकार दूसरी ओर से भी करें।

सावधानी :- पूर्ववत।

लाभ :- पूर्ववत।

५. वज्रासन :- (अ) पहिले की तरह आसन पर पैर फैलाकर बैठ जायें।

(ब) बायें हाथ से बायें पैर को घुटने से मोड़कर बायें नितम्ब के पास रखिये। एड़ी बाहर की ओर निकली रहेगी तथा पंजा नितम्ब से लगा हुआ धरती से टिका रहेगा। पैर का तलवा आकाश की ओर रहना चाहिये।
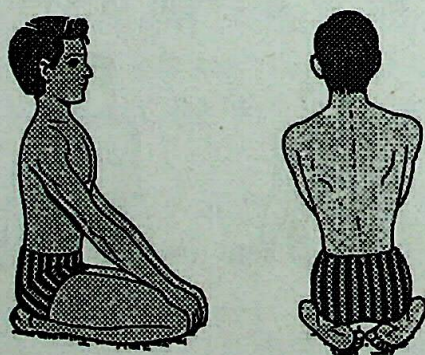
(वज्रासन)

(स) इसी प्रकार दाहिने पैर को मोड़कर दाहिने नितम्ब के पास रखें। इस प्रकार दोनों पैरों की एड़ियां बाहर की ओर रहेगी। दोनों पैरों के अंगूठे एक-दूसरे से मिले रहेंगे। नितम्ब (हिप) दोनों एडियों के बीच में टिके रहेंगे।

(द) घुटने को मिलाकर उन पर दोनों हाथ सीधे रखें। शरीर सीधा, दृष्टि सामने और श्वांस प्रश्वांस सामान्य गति से चलता रहेगा।

लाभ :-

(अ) यह आसन ध्यानात्मक आसन भी माना जाता है। भोजन के बाद १५ मिनिट इस आसन पर बैठने से पाचन क्रिया सुगमता से सम्पन्न होती है।

(ब) इस आसन से घुटनों का दर्द (अर्थराइटिस) नहीं होता। तथा यह आसन लकवा की स्थिति में एक दिव्य औषधि का काम करता है। अतः समस्त वात व्याधियों के लिये यह आसन अत्यन्त उपयोगी माना जाता है।

(स) उड्डियान बंध प्राणायाम तथा अश्विनी मुद्रा बड़ी सरलता से इसी आसन में बैठ कर किये जा सकते हैं।

६. सुप्तवज्रासन :-

वज्रासन में ही पीठ के बल लेट जाने को सुप्तवज्रासन कहते हैं।

(अ) वज्रासन की स्थिति में बैठिये।

(ब) दोनों हाथों को दोनों तरफ कमर के बराबर रखकर उनकी सहायता से धीरे-ध ीरे शरीर को पीछे मोड़ते हुये सिर को भूमि पर टिका दीजिये। हाथों की कोहनियों को भूमि पर टिकी हुयी सिर के पीछे आपस में बांध ले तथा कमर व छाती ऊपर उठी रहेगी। दोनों घुटने आपस में मिले रहेंगे।
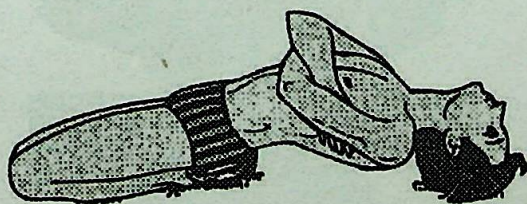
(सुप्त वज्रासन)

(स) धीरे-धीरे सिर, ग्रीवा, कंधे, पीठ सभी को भूमि पर टिकाने का प्रयास करें।

(द) यदि घुटने भूमि पर न टिकें या उन्हें मिलाने में कुछ कठिनाई हो तो हाथों से टखनों को सहायता दी जा सकती है।

(य) आसन छोड़ने के लिये कोहनियों और हाथों का सहारा लेकर धीरे से ऊपर उठकर वज्रासन की स्थिति में बैठ जाना चाहिये।

यह आसन १ से २ मिनिट करना पर्याप्त है।

सावधानी :-

(अ) इस आसन को शीध्रता से नहीं करना चाहिये क्योंकि घुटनों के जोड़ उखड़ सकते हैं।

(ब) जिनके पेट में अल्सर आदि है उन्हें भी यह आसन नहीं करना चाहिये।

लाभ :-

(अ) इस आसन से पेट के नले खिचते है जिससे नाभि टलना दूर हो जाता है।

(ब) इस आंसन से बड़ी आंतें सक्रिय हो जाती हैं जिससे कब्ज का रोग दूर हो जाता है।

(स) आगे झुककर अधिक काम करने से होने वाली कमर की पीड़ा इससे दूर होती है।

(द) पेन क्रियाज पर इसका पूरा प्रभाव पड़ता है जिससे डायबिटीज रोग दूर होता है।

(य) पेडू प्रदेश पर भी इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है।

७. मण्डूकासन :-
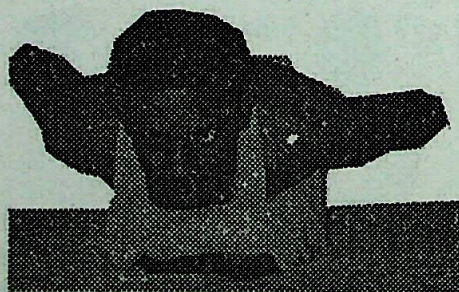
(मण्डूकासन)

(अ) वज्रासन की स्थिति में बैठ जायें।

(व) दोनों हाथों की मुट्ठियां बनाते हुये नाभि के दोनों ओर रखें। मुट्टी से नाभि के भाग को अन्दर की ओर दवाते हुये। श्वांस छोड़ते हुये धीरे-धीरे कमर से नीचे झुकें। दृष्टि सामने रखें। जिससे गरदन नहीं झुकेगी। सीना घुटने से लग जायेगा।

(स) इसी स्थिति में १० सैकिण्ड रहने के बाद श्वांस भरते हुये धीरे-धीरे ऊपर उठें इसी प्रकार कम से कम ५-७ चक्र करें।

(द) अव हाथों को खोलकर पहिले बायें हाथ के पंजे को नाभि पर फिर दाहिने हाथ को बायें हाथ के ऊपर रखें। श्वांस छोड़ते हुये हाथों से पेट को दबाते हुये धीरे-धीरे नीचे झुकें तथा दृष्टि सामने रखें।

सावधानी :-

(अ) जिनके कमर या कंधे में दर्द है ऐसे लोगों को यह आसन नहीं करना चाहिये।

(ब) जिन स्त्रियों के बड़े ऑपरेशन हुये हों उन्हें भी यह आसन नहीं करना चाहिये।

(स) पेट में अल्सर या हर्निया के रोगी को भी यह आसन नहीं करना चाहिये।

लाभ :- (अ) इस आसन से पेनक्रियाज सक्रिय होता है जिससे प्राकृतिक रूप से इन्सुलिन बनने लगता है जिससे डायबिटीज दूर होती है।

(ब) पेट की मांस पेशियां खिंचती है जिससे उन पर जमी फालतू चर्बी दूर हो जाती है इससे पेट का मोटापा दूर होता है।

(स) बड़ी आंतों पर प्रभाव पड़ता है इससे कोष्ठ वद्धता दूर होती है।

८. कूर्मासन :-

(कूर्मासन)

विधि –

(अ) वज्रासन की स्थिति में बैठ जायें।

(ब) हाथों की मुट्ठियां बंद कर कोहनियों को आपस में मिलाकर नाभि के पास रखें। कोहनियों से पेट के भाग को अन्दर की ओर दबाते हुये श्वांस छोड़ते हुये धीरे-धीरे नीचे झुकें। झुकते हुये दृष्टि सामने रखें।

(स) कम से कम १० सैकिण्ड इसी स्थिति में रहने के बाद धीरे-धीरे अपनी मूल स्थिति में वापिस आ जायें। इसके भी ५-६ चक्र करने चाहिये।

सावधानी :- पूर्ववत।

लाभ :- पूर्ववत।

६. उष्ट्रासन :-
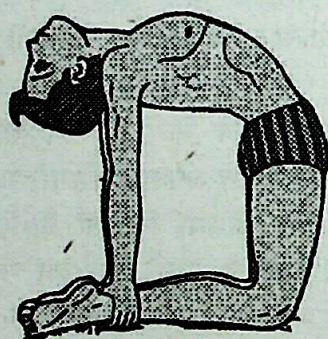
(उष्ट्रासन)

विधि –

(अ) वज्रासन की स्थिति में बैठ जायें।

(ब) दोनों हाथ कंधे के समानान्तर आगे निकालते हुये घुटनों के बल खड़े हो जायें। पैर की उंगलियां धरती से तथा एड़िया ऊपर की ओर उठी रहेंगी।

(स) अब श्वांस भरते हुये बायें हाथ को पीछे मोड़कर बायें पैर की एड़ी पकड़े तथा इसी प्रकार दाहिने हाथ को पीछे मोड़कर दाहिने पैर की एड़ी पकड़ लें।

(ट) गरदन को पीछे झुका दें। जब तक श्वांस आसानी से रूके तब तक रोके उसके बाद लम्बी-गहरी श्वांस लेते रहें। लेकिन आसन में १-२ मिनिट बने रहें।

(य) आसन छोड़ते समय पहिले गर्दन सीधी फिर दोनों हाथ सीधे फिर पैरों के पंजों को धरती से मिलाते हुये वज्रासन में बैठ जायें।

सावधानी :-

१. जिनके पेट में अल्सर हो उन्हें यह आसन नहीं करना चाहिये।

२. बड़े ऑपरेशन वाली स्त्रियों को तथा गर्भवती स्त्रियों को भी यह आसन नहीं करना चाहिये।

लाभ :-

१. इस आसन से कमर तथा कंधे का दर्द एवम् गठिया वात दूर होता है।

२. यह आसन छाती, फेफड़ों और हृदय रोगों में लाभकारी है।

३. इस आसन से पेट का मोटापा तथा डायबिटीज दूर होती है।

४. इस आसन से पेट के रोग दूर होकर पाचन शक्ति बढ़ती है।

५. इस आसन से मेरुदण्ड में लचीलापन आता है तथा कमर की फालतू चर्बी हट जाती है।

६. इस आसन से आंखों के विकार जैसे पानी आना, खुजली आना आदि दूर होते है तथा सभी अंग पुष्ट होते हैं।

१०. वज्रासन योग मुद्रा :-

(वज्रासन योग मुद्रा)

(अ) सबसे पहिले वज्रासन में बैठ जायें।

(ब) दोनों हाथों को पीछे बांध लें। श्वांस छोड़ते हुये धीरे-धीरे आगे की ओर झुकते जाइये। गर्दन लम्बी करके नाक से भूमि का स्पर्श करें।

(स) धीमे-धीमे समय बढ़ाते हुये यह आसन १० से २० सैकिण्ड कर सकते है।

(द) श्वांस भरते हुये धीरे-धीरे ऊपर उठें। इस आसन के कम से कम ३ चक्र करने चाहिये।

सावधानी :- कंधे के दर्द वाले तथा कमर के दर्द वाले व्यक्ति इस आसन को न करें।

लाभ :-

१. उदर संबंधी सभी रोगों में अच्छा कार्य करता है।
२. इस मुद्रा से रीढ़ की कार्यक्षमता बढ़ती है।
३. उदर और सीने के स्नायुओं को बलबान बनाता है।
४. कब्ज के लिए यह एक सच्चा व सरल आसन है।

११. वृषासन :-
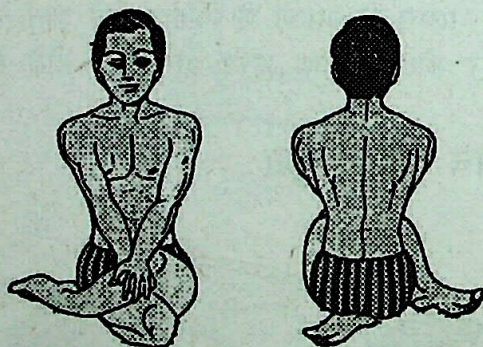
(वृषासन)

विधि -

१. पहिले दायें पैर को घुटने से मोड़कर एड़ी को गुदा द्वार के नीचे लगायें।

२. वायें घुटने को दाहिने घुटने पर इस तरह जमायें कि बाम

पैर की एड़ी दाहिनी जांघ को छुये।

३. फिर तन कर सीधे बैठते हुये दायें हाथ की हथेली घुटने पर फैलाकर उस पर बायें हाथ की हथेली फैलायें।

४. श्वांस-प्रश्वांस की गति सामान्य रहेगी। दृष्टि को नाभि की दिशा में रखिये।

लाभ :-

१. इस आसन से मूत्रोत्सर्ग की क्रिया ठीक ढ़ंग से होती है जिससे शरीर में ताजगी, स्फूर्ति रहती है तथा मन में प्रसन्नता की रहती है।

२. इस आसन से फेफड़े ठीक ढ़ंग से काम करने लगते हैं।

३. इस आसन से धातु क्षय, अजीर्ण, कमर दर्द, हृदय रोग, अनिद्रा आदि रोग दूर होते हैं।

४. इस आसन से शरीर के सभी स्नायु सुदृढ़ बनते हैं।

५. इससे हर्निया में भी विशेष लाभ मिलता है।

१२. गोमुखासन :-
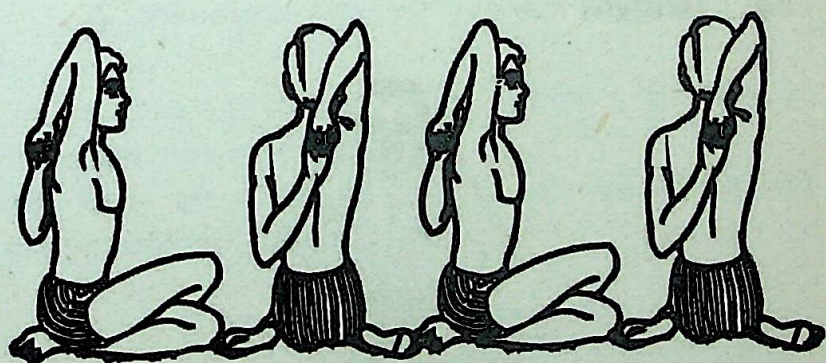
(गोमुखासन)

विधि -

१. वृषासन की स्थिति में बैठकर कमर सीधी रखें।

२. जो घुटना ऊपर हो वही हाथ ऊपर उठाते हुये मोड़कर कमर की ओर ले जायें।

३. दूसरे हाथ की भी पीछे से ले आकर उंगलियों को उंगलियों में फंसायें इसी स्थिति में १ से २ मिनिट तक रूकने का अभ्यास करें। श्वांस-प्रश्वांस की क्रिया सामान्य रहेगी।

४. इसी प्रकार दोनों पैरों दोनों हाथों को बदलकर दूसरी तरफ से भी करें।

लाभ :-

१. यह आसन फेफड़ों के लिये, विशेष रूप से दमें के रोगियों के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

२. यह आसन हर्निया तथा अण्डकोषों की वृद्धि को रोकता है।

३. इससे मधुमेह, बहुमूत्र तथा वीर्य सम्बन्धी विकार भी दूर होते हैं।

४. पीठ तथा गर्दन के दर्द में भी अत्यन्त लाभदायक माना जाता है।

५. बड़ी उम्र में जिन लोगों के हाथ ऊपर नहीं उठते इस आसन से हाथ ऊपर उठने लगते हैं तथा कंधों का दर्द दूर हो जाता है।

१३. सिंहासन :-
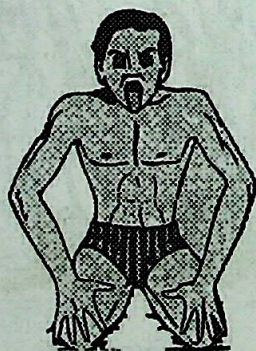
(सिंहासन)

विधि :-

१) वज्रासन की स्थिति में कमर को सीधा रखते हुए बैठ जायें।

२) दोनों घुटने एक-दूसरे से लगभग छः (६) इंच दूर रखिए। दाहिने हाथ के पंजे को दाहिने घुटने पर तथा बायें हाथ के पंजे को बाएं घुटने पर रखें।

३) दोनों नासिका छिद्रों तथा मुख मार्ग से थोड़ी-थोड़ी श्वास छोड़ते जाइए तथा जीभ को मुंह से बाहर निकालिए।

४) जीभ और श्वास दोनों एक साथ ही पूरी तरह से बाहर निकाल दीजिए। अब श्वास लेना बन्द कर दें तथा कमर को सीधी रखें।

५) मुख के सारे स्नायुओं को खींच कर आंखें पूरी तरह से खोलिए जिससे चेहरा डरावना लगे। सामने देखिए।

६) इसी स्थिति में छ से आठ सेकण्ड तक स्थिर रहिए। प्रारम्भ में एक सप्ताह तक इसे प्रतिदिन दो बार करें।

सावधानी :- कुछ लोग इस आसन की अन्तिम स्थिति में बड़ी तीव्र ध्वनि करते है। ऐसा नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से आँख, कान तथा गला सम्बन्धि विकार होने की सम्भावना बनी रहती है।

लाभ :-

१) इससे गले सम्बन्धी समस्त विकार नष्ट होते हैं।

२) श्वसनतन्त्र तथा स्वरयन्त्र पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है।

३) गूंगापर दूर होता है, मुख की सुन्दरता में वृध्दि होती है। आँख, कान तथा त्वचा को लाभ।

नोटः- इस आसन को करने के बाद गले को धीरे-धीरे सहलाना चाहिए।

अध्याय ४
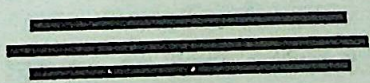
पीठ के बल लेट कर किये जाने वाले आसन

१. शवासन :- यह आसन सभी आसनों के प्रारम्भ में, मध्य में तथा अन्त में किया जाने वाला विश्राम का आसन है। इससे शरीर गत सभी स्नायुओं एवं नाड़ियों को पूर्ण आराम मिलता है। अतः अन्त में १०-१५ मिनिट तक इस आसन को अवश्य करना चाहिए।
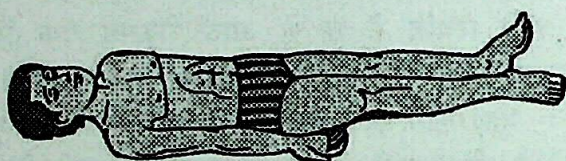
(शवासन)

विधि :-

१) आसन पर पीठ के बल चित्त लेट जाइए।

२) दोनों पैरों के बीच में एक फुट की दूरी होनी चाहिए। एड़ियां एक दूसरे को देखती हुई हों, तथा पंजें धरती से लगे हुए हों।

३) दोनों हाथों को भूमि पर हथेलियाँ आकाश की ओर रखते हुए जांघों से १०-१५ से.मी. दूरी पर रखिए।

४) आँखों को बन्द रखते हुए श्वास-प्रश्वास की क्रिया अत्यन्त मन्द गति से करें। शरीर की प्रत्येक स्नायुओं, नाड़ियों और अवयवों को बिल्कुल ढीला छोड़ दें।

५) अवयवों को शिथिल करने की शुरुआत पैरों के पंजों से कीजिए। पहले पंजे, फिर टखने, पिण्डलियां, घुटने, जाँघें, जंघामूल फिर इसी तरह दाहिने पैर को ढ़ीला छोड़े। फिर बायां हाथ का पंजा, कलाई, कोहनी, बाजूमूल, कन्धा इसी तरह दाहिना हाथ, फिर कमर, पीठ, पेट, सीना, गर्दन, सिर का पिछला भाग, मध्यभाग, फिर अपनी चेतना शक्ति को शरीर के बिल्कुल अलग करें। जैसे

हम शव को देखते हैं, कैसे प्राण रहित अपने शरीर को शव की तरह कल्पना शक्ति से देखें।

६) १०-१५ मिनिट इस तरह यौगिक क्रिया करने के बाद अपनी चेतना शक्ति को अपने शरीर में प्रवेश कराइए। पहले बायें पैर में चेतना शक्ति प्रविष्ट हुई इससे पैर हिलाऐं। फिर दाहिना पैर हिलायें, फिर बायां हाथ, दाहिना हाथ, कमर, पेट, पीठ, सीना, गर्दन अन्त में सिर तथा आँख आदि पूरा चेहरा को हिलायें। अब चेतना शक्ति दुबारा आप के शरीर में प्रविष्ट हो गयी है। जिससे आप का शरीर हल्का तथा प्रफुल्लित अनुभव हो रहा है।

इस क्रिया से आप को एक अपूर्व शान्ति, आराम और सन्तोष का अनुभव होगा जैसा पहले नहीं हुआ होगा। जिन लोगों को विशेष मानसिक तनाव, डिप्रेशन या हृदयरोग आदि हो उन्हें नियमित रूप से प्रतिदिन केवन एक यही आसन करेंगे तो भी उन्हें अभूतपूर्व लाभ होगा।

लाभ :-

१) शवासन विश्राम एवं ध्यान दोनों का समन्वयात्मक आसन है। इसमें न केवल तनाव ही बल्कि अन्तःकरण भी सुशान्त हो जाता है।

२) इससे शरीर गत सभी स्नायुओं को आराम मिलता है।

३) कमजोर व्यक्ति और जिन्हें शारीरिक तथा मानसिक थकावट विशेष लगती हो उन्हें इस आसन से नई शक्ति और नया उत्साह मिलता है।

४) इससे अनिद्रा, रक्त चाप, नाड़ियों की दुर्बलता, गैस आदि कठिन रोगों में भी आराम मिलता है।

५) हृदय तथा मानसिक रोग वाले व्यक्ति को तुरन्त राहत मिलती है।

६) इससे समग्र शरीर में शुद्ध रक्त का संचार सम्यकतया सम्पन्न होता है। जिससे शरीर में नव जीवन का संचार होता है।

७) निरन्तर के अभ्यास से क्रोध धीरे-धीरे शान्त होने लगता है। अतः प्रत्येक योगाभ्यासी को यह आसन प्रतिदिन सबसे अन्त में नियमित रूप से करना चाहिए।
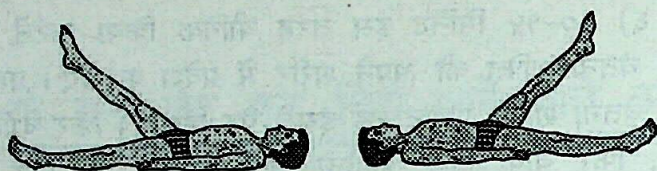
२. एकपाद - उत्तानासन

(एकपाद - उत्तानासन)

इस आसन से विशेष रूप से पेट के स्नायुओं को पर्याप्त मात्रा में व्यायाम मिलता है अतः इस आसन को क्रमशः पैर बदल-बदल कर १०-१० बार अवश्य करना चाहिए।

विधि :-

१) पीठ के बल लेट जायें तथा दोनों पैरों की एड़ियां आपस में मिलाकर रखें। दोनों हाथों को बगल में सटाकर रखें।

२) अब श्वास फेफड़ों में भरते हुए पहले बायां पैर धीरे-धीरे ऊपर उठायें। ६०° तक ले जाकर वहीं थोड़ी देर रोक कर रखें। पंजा आगे की ओर खिंचा रहेगा। घुटना सीधा रहना चाहिए।

३) कम से कम १० सैकिण्ड तक इसी स्थिति में रूकने के बाद श्वास छोड़ते हुए धीरे-धीरे पैर नीचे लाकर धीरे से धरती पर रख दीजिए। अब यही क्रिया दाहिने पैर से भी सम्पन्न कीजिए। कम से कम ५-५ बार दोनों पैरों से बदल-बदल कर यही क्रिया सम्पन्न करनी चाहिए।

सावधानी :-

१) पैर झटके के साथ ऊपर नहीं ले जाना है।

२) पैर का घुटना बिल्कुल सीधा रहे इस बात का विशेष ध्यान रखना है।

३) दूसरा पैर बिल्कुल ढीला छोड़ देना चाहिए।

लाभ :-

१) इससे पेट की समस्त मांस पेशियों का सुन्दर व्यायाम हो जाता है।

२) इस आसन से कब्ज, अनपच, वायुविकार, गैस तथा आंतों की अव्यवस्था दूर होती है। तथा पेट का मेद भी कम हो जाता है।

३) बहनों की मासिक धर्म सम्बन्धी विकार भी (दर्द) दूर हो जाता है।

४) इससे रक्त संचार की प्रक्रिया पैरों में सुचारू ढ़ंग से होती

है जिससे पैरों की सूजन तथा घुटनों का दर्द भी दूर हो जाता है।

५) इससे फेफड़े सशक्त बनते है तथा जांघों एवं कमर पर जमी हुई फालतू चर्बी छट जाती है।

३ एकपाद वृतासन
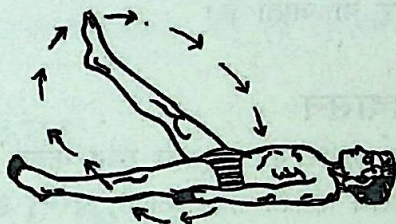
(एकपाद वृतासन)

विधि :-

१) पीठ के बल पैर फैलाकर लेट जाइए। दोनों पैरों की एड़ियां आपस में मिलाकर रखिए। दोनों हाथों को कमर के बगल में हथेलियां ऊपर की ओर भूमि पर रखिए।

२) अब श्वास रोककर मुठ्ठी बन्द कर लें। बांया पैर धीरे -धीरे ६०° तक ऊपर उठायें।

३) दाहिना पैर धरती पर ही सीधा पड़ा रहेगा। अब ऊपर वाले बायें पैर को गोल चक्र में ५-५ बार कम से कम दोनों तरफ से घुमाइए।

४) अब यही क्रिया दाहिने पैर से भी ५-५ बार (क्लॉक वाइज तथा एन्टी क्लॉक वाइज) दोनों तरफ से गोल चक्र में घुमाऐं।

सावधानी :-

१) वृत अर्थात् गोला जितना लम्बा होगा, फायदा भी उतना ही अधिक होगा।

२) पैर को गोल चक्र में धीरे-धीरे घुमाना चाहिए। झटका बिल्कुल भी नहीं लगाना चाहिए।

लाभ :-

१) इस आसन से रक्त परिभ्रमण की क्रिया ठीक ढंग से होने लगती है। जिसके परिणाम स्वरूप स्लिप-डिस्क, साइटिकापेन, घुटने का दर्द तथा पैरों की जलन आदि दूर हो जाती है।

२) इस आसन से कमर का घेरा कम तथा जांघें सुडौल एवं दर्शनीय हो जाती है।

३) इस से तोद अन्दर भी हो जाती है तथा भार कम होता है।

४) इसमें पेनक्रियाज सक्रिय हो जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप इन्सुलिन प्राकृत रूप से बनने लगता है, जिससे डायबिटीज (मधुमेह) रोग दूर हो जाता है।

४. उत्तानपादासन

यह आसन शरीर की स्थूलता तथा कब्ज को दूर करता है। यह एकपाद-वृत्तासन की ही तरह का है, परन्तु इसमें दोनों पैर एक साथ ही उठायें जाते हैं।
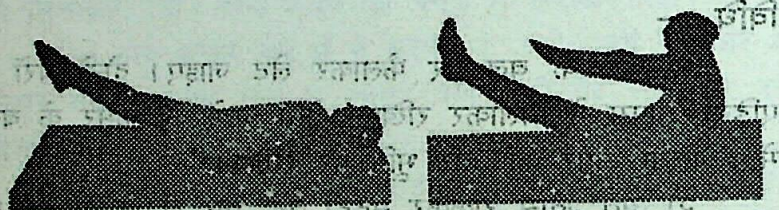
(उत्तानपादासन)

विधि :-

१) पीठ के बल लेटकर दोनों हाथ शरीर के दोनों ओर रखिए।

२) दोनों पैरों की एड़ियाँ और पंजे साथ-साथ मिलाकर रखिए।

३) अब श्वांस भर कर धीरे-धीरे दोनों पैर ऊपर की ओर उठाइए।

४) दोनों पैर धरती से लगभग एक-डेढ़ फुट ऊपर रहना चाहिए। इसी स्थिति में लगभग १० सैकिण्ड तक रूकने के बाद धीरे-धीरे पैर नीचे लाकर भूमि पर रख दें।

५) इस आसन को ३ से ५ बार तक आसानी से कर सकते हैं।

लाभ :-

१) इससे पेट के समस्त स्नायुओं का व्यायाम होता है। इससे पेट के स्नायु सशक्त बनते है जिससे पाचन तन्त्र ठीक काम करता है।

२) इससे कब्ज दूर हो जाती है।

३) इससे शरीर का भार कम होता है।

४) कमर दर्द, पीठ का दर्द, नितम्ब की तकलीफें एवं पेट में कृमि दूर करने में यह अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है।

५) इससे मेरुदण्ड सशक्त एवं लचकीला बनता है।

६) प्रारम्भिक अवस्था के अर्श(बवासीर) दूर हो जाते हैं।

७) यह आसन सर्वांगासन की पूर्व तैयारी का आसन माना जाता है।

५. पवनमुक्तासन

(पवनमुक्तासन)

इस आसन से विशेष रूप से पेट की गैस (अपानवायु) मुक्त हो जाती है। इसी से इसका नाम पवनमुक्तासन रखा गया है।

विधि :-

१) पीठ के बल सीधे लेट जाइए तथा दोनों पैरों की एड़ियों को आपस में मिला कर रखें।

२) अब श्वास भर कर पहले बायां घुटना मोड़कर दोनों हाथ की अंगुलियां आपस में फंसा कर उससे घुटने को सीने से दबाकर रखिए।

३) फिर श्वास छोड़ते हुए सिर को जमीन से ऊपर उठाकर ठोड़ी को घुटने से लगाने का प्रयत्न करें।

४) इसी तरह दाहिने पैर से सम्पन्न करें। तथा फिर दोनों पैरों को एक साथ मोड़कर भी करना चाहिए।

५) फिर इसी अन्तिम स्थिति में दोनों पैर मोड़े रही पीछे सिर आगे पैर के पंजे धरती से लगाते हुए कुछ देर झूला आसन

भी करना चाहिए।

सावधानीः-

१) जिन के पेट का लम्बा ऑपरेशन हुआ हो उन्हें तथा पेट में अल्सर वाले रोगी को भी यह आसन नहीं करना चाहिए।

२) गर्भवती स्त्रियों को भी यह आसन नहीं करना चाहिए।

लाभः-

१) इससे अपानवायु बड़ी सरलता से बाहर निकल जाती है।

२) यह हृदय रोग एवं फेफड़ों को रोग मुक्त करता है।

३) इससे गैस, मलावरोध, अपच, गर्भाशय के रोग, पेडू की पीड़ा, कमर दर्द, कृमि रोग, आंत्रवृद्धि, वातरोग, अर्श तथा रक्तविकार आदि अनेक रोग इस आसन से दूर हो जाते हैं।

६. सेतुबन्धासन
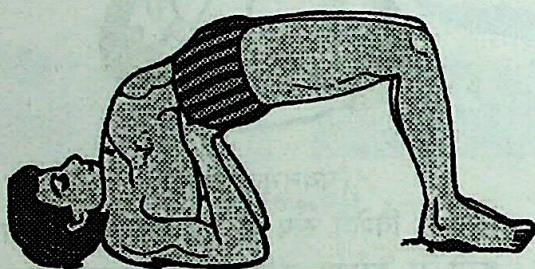
(सेतुबन्धासन)

इस आसन में सेतु अर्थात् पुल के जैसा आकार बनता है। इसीलिए इसे 'सेतुबन्धासन' कहा जाता है।

विधिः-

१) पीठ के बल पैर फैला कर शवासन में लेट जाइए।

२) दोनों घुटने मोड़ लीजिए, घुटने आकाश की ओर तथा पैर के तलवें जमीन पर टिका होना चाहिए।

३) कमर को हाथ का सहारा देते हुए ऊपर की ओर उठायें। सिर गर्दन तथा दोनों कन्धे जमीन पर ही रहेगा।

४) श्वास-प्रश्वास की क्रिया सामान्य रूप से चलती रहेगी। इसी स्थिति में कम से कम १० सेकण्ड रुकिए फिर कमर को ढ़ीला छोड़कर थोड़ी देर विश्राम करें। इस प्रकार इसके कुल ३-५ चक्र सम्पन्न करें।

लाभः-

१) इस से कमर ओर पुट्ठे स्वस्थ बनते हैं।

२) इससे कन्धा, गर्दन, कुहनी तथा हाथ के पंजे के जोड़ों को बड़ा सुन्दर व्यायाम मिलता है और वे सशक्त बनते हैं।

३) इस आसन से गैस तथा अनपच जैसे रोग दूर हो जाते हैं।

४) इससे मेरूदण्ड में लचीलापन आता है।

७. पार्श्वोत्तान-पादासन
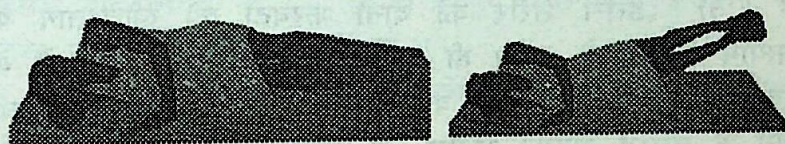
(पार्श्वोत्तान पादासन)

विधिः-

१) दोनों पैर सीधे रखते हुए वार्यी करवट पर लेट जाइए। एक पर दूसरा पैर इस प्रकार दोनों पैर सटाकर यह कसरत करनी चाहिए। ध्यान रहे कि न पैर मोड़े न ही अलग रखें।

२) दाहिने हाथ का पंजा छाती के सामने धरती पर जमा कर रखें।

३) अब बिना मोड़े दोनों पैरों को एक साथ ऊपर उठाइए। जितना ऊपर उठा सकें उतना ऊपर उठाइए।

४) इसी स्थिति में पैरों को ५० सेकण्ड तक उठाये रखिए। इस के बाद धीरे-२ पैरों को पुनः मूल स्थिति में ले आइए। ऐसा ५-१० बार करें।

५) इसी प्रकार करवट पर लेटे ही लेटे दोनों पैर ऊपर उठा कर पीछे की ओर यथा शक्ति ताने। ध्यान रहे घुटने न मुड़े थोड़ी देर इसी स्थिति में रुकने के बाद अपनी मूल स्थिति में वापिस आ जायें। यह क्रिया भी ५-१० बार तक करनी चाहिए।

६) इसी प्रकार तीसरे चक्र में पैर यथा शक्ति ऊपर उठाकर आगे की ओर ताने थोड़ी देर रुकने के बाद अपनी मूल स्थिति में वापिस आ जाइए। इसी प्रकार रुक-२ कर ५-१० बार करना चाहिए।

७) उपर्युक्त कसरते करने के बाद करवट बदलकर दायीं ओर से भी इसी प्रकार सारी क्रियाएं सम्पन्न करें।

सावधानी:- १) इस आसन को करते समय आंखे बन्द ध्यान पेडू की ओर केन्द्रित करके उक्त आसन पूर्ण सकारात्मक भावना के साथ सम्पन्न कीजिए।

२) एक बार श्वास भर कर आसन प्रारम्भ करें, फिर सामान्य अवस्था में चलने देते हैं।

लाभ:-

१) इससे शरीर की दोनों करवटों को खींच-तान का व्यायाम मिलता है, साथ ही कटि-प्रदेश के समस्त अवयवों का संकोच-विकास और दबाव का व्यायाम मिलता हैं। जिससे कटि भाग के समस्त अवयव सुडौल एवं सुगठित बनते हैं।

२) दुबले-पतले अंगों में रक्त का संचार ठीक ढंग से होने लगता है। जिसके कारण वजन बढ़ जाता है।

३) इस आसन में कटि-प्रदेश की स्थूलता (भारीपन) कम हो जाता है, शरीर सुडौल हो जाता है।

४) इससे कमर का दर्द, साइटिका पेन, घुटने का दर्द आदि दूर हो जाता है।

८. पाद-प्रहारासन
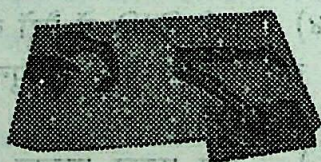
(पाद प्रहारासन)

विधि:-

१) दोनों पैर सीधे रखकर बायीं करवट के बल लेट जाइए।

२) पैर एक दूसरे के ऊपर तथा दाहिने हाथ की हथेली को सीने के सामने भूमि पर रखें।

३) पैर के आगे एक तकिया रखिए। अब पूर्ववत पैर श्वास भरते हुए बायां पैर सीधा ऊपर उठाइए। फिर धीरे-धीरे नीचे पैर

पर पैर रख दीजिए। ऐसा ५-१० बार कीजिए।

४) इसी प्रकार ५-१० बार पैर आगे की ओर तथा ५-१० बार पैर पीछे की ओर भी खीचें। ध्यान रहे घुटना सीधा तथा पंजा आगे की ओर खिंचा रहना चाहिए।

५) अब पहले श्वास भरकर बायें पैर को सीधा ऊपर ६०° अंश तक उठाइए। फिर पैर को कुछ आगे की ओर ले जाकर पूरी ताक़त (शक्ति) से तकिये पर इस तरह पछाड़िए जैसे आप किसी शत्रु को लात मार रहे हों। इसे भी ५-१० बार कर लेना चाहिए। इसके बाद नियम नं. (४) की तरह पैर ऊपर उठाकर आगे पीछे तथा ऊपर की ओर करना चाहिए।

६) इस प्रक्रिया को दुवारा दाहिने करवट लेकर दाहिनी तरह से भी करना चाहिए।

सावधानी :-

१) हर आसन के बाद शवासन में विश्राम करना अत्यन्त आवश्यक है।

२) पाद प्रहार तथा उसके बाद पैर को उठाकर आगे, पीछे तानते समय धुटना सीधा तथा पंजा विशेष रूप से सामने की ओर खींचा रहे इस बात का विशेष ध्यान दें।

३) इस आसन का ध्यान बिन्दु लीवर (यकृत) है। वहीं ध्यान केन्द्रित रखते दृढ आसन करना चाहिए।

लाभ :-

१) इससे यकृत का संकोच-विकास-दबाव ठीक ढ़ंग से होता है जिससे यकृत स्वस्थ होकर ठीक काम करने लगता है।

२) इस आसन के करने से यकृत की विकृति से उत्पन्न होने वाली मधुमेह, पीलिया तथा चर्मरोग आदि नहीं होती और यदि ये रोग हो गया हो तो उससे आराम मिलता है। लम्बे समय तक आसन करते रहने से तथा परहेज करने से बीमारी नष्ट हो जाती है।

९ उदरामृत क्रिया

इस कसरत में विशेष रूप से उदर के समस्त अंगों पर दबाब देते हुए मालिश की जाती है इसी लिए इसे उदरामृत क्रिया कहते हैं।

विधि :-

१) इस क्रिया के लिए आप पीठ के बल पैर फैला कर दोनों पैरों की एड़ियां आपस में मिलाते हुए लेट जाइए।

२) श्वास सम रखते हुए दोनों हाथों से पेट पर दबाव देते हुए पहले नीचे से ऊपर की ओर मालिश करें। ध्यान रहे मालिश बड़े आराम से धीमे-धीमे करनी चाहिए।
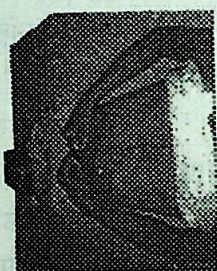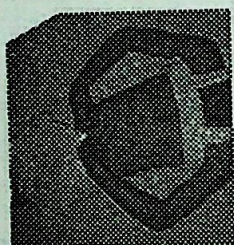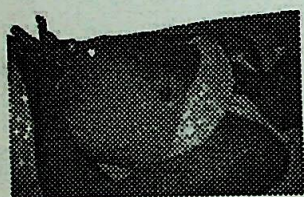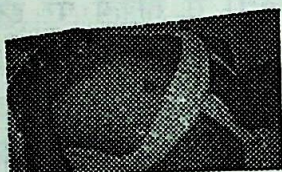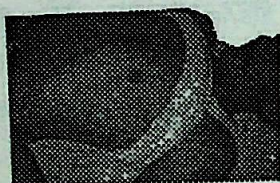
३) इसके बाद ऊपर से नीचे की ओर भी एक मिनिट तक पैर की मालिश करें।

४) अब दोनों हाथों की अंगुलियां परस्पर फंसा लीजिए तथा पेट को कड़ा रखते हुए घर्षण मालिश कीजिए।

५) अब दोनों हाथों को आमने-सामने रखते हुए घर्षण मालिश करिए। दोनों किनारों से दवाव देते हुए नाभी की ओर जाइए।

६) अब पेट को ढ़ीला छोड़ते हुए जल्दी-जल्दी हल्के से दोनों हाथों की अंगुलियाँ पेट में दबाऐं, (अंगुलियों से पेट पर पंच) श्वास-प्रश्वास क्रिया सामान्य रहेगी।

७) अब पेट के समस्त स्नायुओं को कड़ा (तंग) करके दोनों हाथों की मुट्ठियों से पेट को थपथपाने की क्रिया करें। कहने का भाव है कि मुट्ठियों से पेट के स्नायुओं को आहिस्ता-आहिस्ता ठोकिये।

८) अब दोनों पैर घुटने से मोड़कर एड़ियां जांघ के मूल से

लगाइए। घुटने आकाश की ओर तथा पैर के पंजे धरती पर रहें। इस स्थिति में पेट का मेद तथा यकृत दोनों ऊपर की ओर आ जाते हैं। अब फिर मुट्ठियों से हल्के-हल्के हाथों से थपथपाइए।

लाभ :-

१) इससे पेट के स्नायुओं में रक्ताभिसरण बड़ी तेजी से होने लगता है। जिससे शिराऐं और केश वाहिनियाँ भी बड़ी पुष्ट और मजबूत बनती है।

२) इस क्रिया का प्रभाव यकृत पर विशेष रूप से पड़ता है। जिससे यकृत की खरावी दूर हो जाती है। जिसके कारण दुर्बलता, शरीर का रूखापन दूर होकर शरीर सुन्दर एवं चेहरा दर्शनीय बनता है।

३) पेट पर फालतू जमा चर्बी दूर हो जाती है।

४) पुरानी से पुरानी कब्जियत भी धीरे-धीरे दूर होने लगती है। भूख खुल कर लगती है।

५) यकृत की खराबी से होने वाले समस्त रोग जैसे पीलिया तथा हैपिटाइटिस-बी आदि रोग दूर हो जाते हैं।

१० अश्वासन
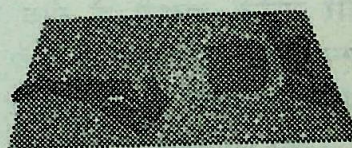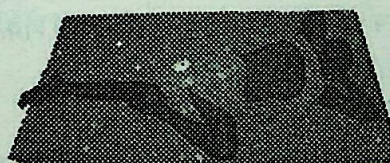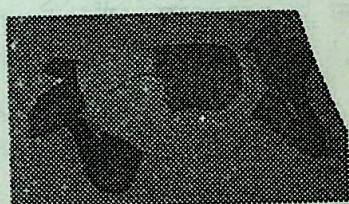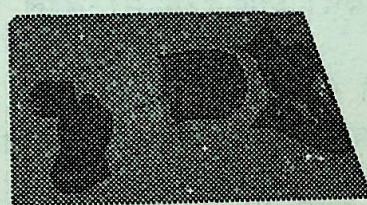
(अश्वासन)

इस का विशेष प्रभाव रीढ़ के मनकों तथा कमर पर विशेष रूप से पड़ता है, जिससे मेरूदण्ड लचकीला एवं सारा शरीर स्वस्थ रहता है। इसी कारण कोई-कोई इसे कटिचक्र के नाम से भी पुकारते हैं।

विधि :-

१) पीठ के बल दोनों पैर फैलाकर लेट जाइए।

२) अब दोनों घुटनों को आकाश की ओर उठाइए। दोनों एड़ियों को गुदाद्वार का स्पर्श हो, इस प्रकार जमा कर रखिए।

३) दोनों हाथों को अंगुलियां आपस में फंसा कर सिर के नीचे लगा लें। अब पीठ को बिना हिलाए-डुलाए दोनों घुटनों को आपस में सटाकर रखते हुए ही बायीं ओर भूमि से लगाने का प्रयास कीजिए। तथा गर्दन को दाहिनी ओर मोड़ लीजिए। श्वास-प्रश्वास की क्रिया पूरे आसन में सामान्य ही रहेगी।

४) अब गर्दन को बायीं ओर तथा घुटनों को दाहिनी ओर भूमि से लगाने का प्रयास कीजिए। यह क्रिया ५-६ बार दोहरानी चाहिए।

५) इसके बाद दोनों एड़ियाँ एक फुट के अन्तर (फासले) पर रखते हुए पूर्ववत् ही दायीं तथा बायी गर्दन तथा घुटने को मोड़ते हुए सम्पन्न करें।

६) अब दूसरे चक्र में दाहिना पैर भूमि पर सीधा फैलायें तथा बायें पैर का पंजा दाहिनी जाँघ पर जमाकर गर्दन बायी ओर तथा घुटना दाहिनी ओर भूमि से लगाइए। इसी तरह पैर वदल कर दाहिने पैर से भी करें ५-६ बार।

७) अव तीसरे चक्र में पहले बायें पैर के पंजे को दाहिने पैर के घुटने से आगे पिण्डलियों के ऊपरी भाग पर जमाकर दोनों तरफ से पूर्ववत क्रिया सम्पन्न करें।

८) चौथे चक्र में - बायें पैर की एड़ी दाहिने पैर के अंगुठे और तर्जनी अंगुली के बीच में फँसा कर पूर्ववत् दायें-बायें क्रिया सम्पन्न करनी चाहिए।

सावधानी :-

१) उपर्युक्त सभी क्रिया में यह विशेष रूप से ध्यान रखें कि - बल लगाकर घुटना भूमि से लगाने का प्रयत्न न करें। कहने के भाव है कि दबाव अधिक न दें।

२) श्वास-प्रश्वास क्रिया सामान्य रखते हुए एक आकृति में १०-५० सेकण्ड तक बने रहना चाहिए।

लाभ :-

१) इस आसन से कटि प्रदेश के समस्त प्राणधारक अंगों को समुचित व्यायाम मिलता है। जिससे वे पुष्ट एवं निरोग बनते हैं।

२) इससे लम्बर रीजन की समस्त विकृति दूर होती है जिससे होने वाला साइटिक पेट तथा स्लिप-डिस्क एवं घुटने का दर्द दूर हो जाता है।

३) इस आसन से मेरुदण्ड लचकीला एवं सुदृढ़ बनता है जिसके फलस्वरूप शरीर में लोच बनी रहती है।

४) सर्वाइकल रीजन की समस्त विकार जैसे कन्धे का दर्द आदि भी इससे दूर हो जाते हैं।

११ सुप्तपाद कटि आसन

(सुप्तपाद कटि आसन)

इस आसन में पैर कटि (कमर) के पास लगाकर सम्पन्न किया जाता है अतः इसका नाम सुप्तपाद कटि आसन है।

विधि :-

१) दोनों पैर सामने फैलाकर पीठ के बल लेट जाइए।

२) अब दोनों पैरों के पंजों को दीवार से सटा कर रखिए तथा एड़ियाँ भूमि को छूती रहें। इसी स्थिति में श्वास भर दीवार पर दबाव डालिए। इस प्रकार कम से कम दस बार पूरी शक्ति लगाकर दबाव देना चाहिए।

३) अब बायें पैर का घुटना आकाश की ओर रखते हुए पंजे को दाहिनी जांघ के बाहर भूमि से सटाकर रखिए।

४) इसके बाद श्वास भर हाथों से बायें घुटने को सीने की ओर तथा दाहिने पैर को सीधा रखते हुए दीवार की ओर पूरी शक्ति लगाकर दबाव डालिए। रूक-रूक कर इस क्रिया को भी १० बार सम्पन्न कीजिए।

५) इसके बाद दाहिने पैर को बायीं ओर लगाकर भी पूर्ववत् वही क्रिया दुहरायें।

लाभ :-

१) इससे जठराग्नि खूब प्रदीप्त हो जाती है जिससे मन्दाग्नि भूख न लगने की बीमारी दूर हो जाती है।

२) इससे पेट का अल्सर और अम्लपित्त स्थान भ्रष्ट हो जाता है, जिससे पित्त अलग हो कर मलद्वार से बाहर निकल जाता है।

३) वात विकार ग्रस्त रोगी की अपानवायु बड़ी आसानी से छूट जाती है।

४) जठर में या मलाशय में यदि पथरी जमा हो गयी हो तो वह भी स्थान भ्रष्ट होकर गल जाती है।

५) इस आसन का ध्यान बिन्दु गुदा है।

६) इससे कमर पर जमा फालतू चर्बी भी दूर हो जाती है।

७) घुटना तथा कमर दर्द में भी यह लाभदायक है।

१२ ग्रीवा संचालन
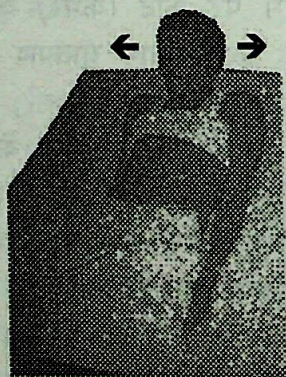
(ग्रीवा संचालन)

इस आसन में ग्रीवा अर्थात् गर्दन को आगे-पीछे, दायें-बायीं ओर विधि से संचालित (घुमाया) जाता है अतः इसे ग्रीवा संचालन कहते हैं।

विधि :-

१) पीठ के बल चित्त लेटकर दोनों पैरों की एड़ियाँ आपस में मिलाकर रखें। दोनों हाथ कमर की ओर जांघो से सटा कर रखिए।

२) श्वास भरते हुए सिर को ऊपर की ओर उठाकर पेडू को देखने का प्रयत्न कीजिए।

३) सिर को आगे की ओर खींचने का प्रयत्न करें। ध्यान रहे यह आसन करते समय पीठ ऊपर नहीं उठनी चाहिए।

४) आसन करते समय जहाँ तक हो सके वहाँ तक पेट के स्नायुओं को खिंचकर तंग रखें। कम से कम ५० सेकण्ड तक पेट के स्नायुओं को इसी तंग स्थिति में रखिए। इसके १० चक्र करें।

५) इसी प्रकार सिर को उठाकर क्रमशः दायें-बायें देखने का व्यायाम पचास-पचास सेकण्ड तक कीजिए।

सावधानी :-

१) इस आसन को करते समय अपना ध्यान सटाकर रखे हुए दोनों पैरों के अँगूठे पर रखें।

२) सिर को ऊपर उठाते तथा नीचे रखते समय बड़ी सावध ाानी के साथ आराम से करनी चाहिए।

लाभ :-

१) इस आसन से 'आम' मुक्त हो जाता है। तथा पाचन क्रिया पर जादुई प्रभाव पड़ता है।

२) इससे थाईराइड - टोंसिल तथा स्वरयन्त्र सम्बन्धि समस्त विकार नष्ट हो जाते हैं।

१३ ग्रीवा की अस्थि वृद्धि (Spondylitis)

दिन भर ग्रीवा झुकाकर लिखना-पढ़ना, ऊँचे-ऊँचे डनलप के गद्दों पर ऊँचा तकिया लगाकर सोना तथा अधिक कोमल गद्दे पर सोने के कारण गर्दन की पांचवी कशेरूका बढ़ जाती है जिससे ग्रीवा प्रदेश, कन्धे तथा हाथों तक पीड़ा की अनुभूति होती है।
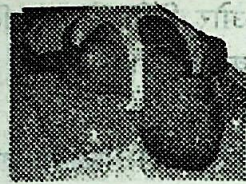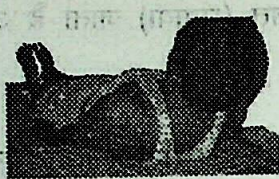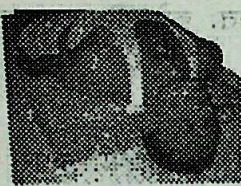
(ग्रीवा की अस्थि वृद्धि)

विधि :-

१) पहले आसन की तरह ही चित लेट जाइए।

२) अब एक गोल तकिया (गोल न मिले तो दो तकिया ऊपर-नीचे रखकर काम चला लें) दोनों कन्धों के ढाल के नीचे इस तरह रखें की गर्दन मोड़कर सिर को पीछे भूमि पर रखा जा सकें।

३) सिर को पीछे की ओर इतना झुकायें कि नीचे की भूमि दिखाई दे।

४) अब श्वास भरते हुए धीरे-धीरे सिर को ऊपर उठाइये। इतना ऊपर उठाइये कि सीना तथा पेडू का भाग दिखाई देने लगे।

५) इस स्थिति में ५० सेकण्ड रुकने के बाद सिर को पीछे ले जाकर भूमि से टिका दें। इस आसन के भी ५-६ चक्र करने चाहिए।

लाभ :-

१) सिर को आगे-पीछे एवं ऊपर नीचे करने से तथा झुकाने से रीढ़, गले एवं सिर के स्नायुओं में कसावट आती है और वे मजबूत होते हैं।

२) इससे गर्दन के स्नायु कस जाते हैं। त्वचा ढ़ीली पड़ गई हो तो स्नायु के कसाव से तंग हो जाती है।

३) ढीले प्रड़े गले, गर्दन और चेहरे के अवयव चुस्त व स्फूर्तियुक्त बन जाते हैं।

४) इससे रीढ़ के अवयव मजबूत और मुलायम हो जाते हैं तथा जठराग्नि सदैव प्रदीप्त रहती है। इस आसन का ध्यान बिन्दु ठोड़ी है।

सावधानी :-

१) उपर्युक्त आसन के हर चक्र के बाद दोनों हाथों से दाढ़ी के नीचे वाले गर्दन के हिस्से को टेंटुए के आसपास की ग्रन्थियों को धीरे-धीरे मसाज करें।

२) ध्यान रहे, टेंटूए पर किसी प्रकार भी दबाव नहीं डालना चाहिए।

१४ सुप्ततानासन
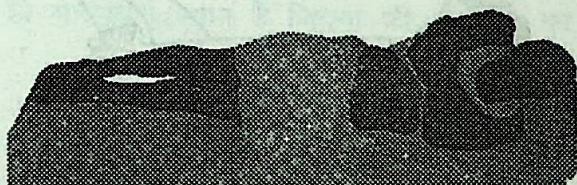
(सुप्ततानासन)

करवट के बल लेट कर पूरे शरीर को ऊपर तथा नीचे की ओर तनाव दिया जाता है इसी हेतु इसे सुप्ततानासन कहते हैं।

विधि :-

१) सबसे पहले बाई करवट लेट कर दोनों हाथ को सीने पर अदब की स्थिति में रखते हुए दोनों हथेलियों से दोनों कोहनियों को पकड़ लें।

२) अब सिर को पीछे की ओर ले जाकर पूरे शरीर को यथासम्भव फैलाकर सीधा कीजिए।

३) इसके बाद श्वास भर दोनों हाथों से कोहनियों पर दबाव देते हुए पूरे शरीर को खींचकर तंग करें। ऐसी स्थिति में सिर पीछे तथा पैर के पंजे पीछे की ओर तने रहेंगे।

४) इसी स्थिति में ५० सेकण्ड रहने के बाद धीरे-धीरे पूरे शरीर को ढ़ीला छोड़ दें। इसके ५-६ चक्र सम्पन्न कीजिए।

५) इसी प्रकार दायीं ओर करवट के बल लेट कर भी सम्पन्न करना चाहिए।

लाभ :-

१) इस आसन से पूरे शरीर को चोटी से ऐड़ी तक का व्यायाम होता है।

२) इससे केशवाहिनी जैसी सूक्ष्म नसों में भी रक्त जोर से बढ़ने लगता है जो की पूरे शरीर को स्वस्थ बनाये रखता है।

३) इससे शरीर के भीतर गहराई में स्थित स्नायु भी उत्तेजित हो जाते हैं और उनमें रक्त का संचार होने लगता है।

१५ सुप्त बटरफ्लाई
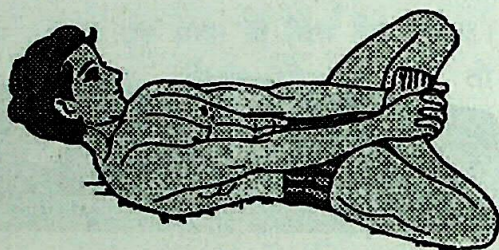
(सुप्त बटरफ्लाई)

विधि :-

१) पीठ के बल लेट कर दोनों पैरों के घुटनों को बाहर की ओर से नीचे झुकाकर गोलाकार बनाइए।

२) अब दोनों पैरों की एड़ियों और तलवों को आपस में मिलाइये। इस प्रकार लेटे ही लेटे दोनों पैरों को गोलाकार बनाइए।

३) अब जल्दी-जल्दी दोनों घुटनों को ऊपर-नीचे करें।

४) इसके बाद श्वास भरते हुए दोनों हाथों की सहायता से दोनों घुटनों को यथासम्भव भूमि से लगाने का प्रयास करें।

५) कम से कम एक मिनट तक इसी स्थिति में रहने का प्रयत्न करें।

सावधानी :-

१) प्रारम्भ में १० सैकण्ड हो तो भी कोई चिन्ता नहीं समय की अवधि खुद बढ़ जायेगी।

२) श्वास न भी रुके तो भी आसन में एक मिनट तक दीर्घ-श्वास लेते हुए वने रहना चाहिए।

लाभ :-

१) इस आसन में पैर, जाँघ, पिंडली, कटिप्रदेश के जननाँगों को उचित व्यायाम मिलता है। जिससे ये अंग निरोग रहते हैं।

२) इससे घुटने तथा कमर का दर्द दूर होता है।

१६ सर्वांगासन

'जैसा नाम वैसा गुण' इस कहावत को चरितार्थ करते हुए इस आसन से शरीर के सभी अंगों को समान रूप से व्यायाम मिलता है, इसी हेतु इसे सर्वांगासन कहा जाता है। योगासनों में सर्वांगासन का उतना ही महत्वपूर्ण स्थान है जितना की शीर्षासन का है।

विधि :-

१) पीठ के बल एकदम चित्त लेट जाइए। हाथ कमर की ओर जाँघों से सटे रहेगें।

२) अब श्वास भरते हुए दोनों पैरों को एक साथ बिना घुटना मोड़े धीरे-धीरे ऊपर उठाइए। पहले एक फुट तक ऊपर उठाकर थोड़ा रोकें, फिर १ १/२, २ फुट तक ऊपर उठाकर रोकें तथा अन्तिम में ९०° तक ऊपर उठायें।

३) अब थोड़ा कमर को झटका देकर हाथों से कमर को सहारा देते हुए पूरे शरीर को ऊपर उठाइये। इतना ऊपर उठायें कि सिर, गर्दन तथा दोनों कन्धे ही भूमि से लगे रहें।

४) इसके बाद दोनों पैरों को दायें-बायें यथा शक्ति फैलाइये कम से कम १० सेकण्ड रुकने के बाद फिर दोनों पैर आपस में मिला लें। ऐसा कुल १० बार करें।

५) इसके बाद पैरों को आगे-पीछे अधिकाधिक खोलने का प्रयास करें। कुल १० बार।

६) अब उलटी-सीधी साइकिलिंग (साइकिल) की तरह दोनों पैरों को घुटने से मोड़ कर चलाइए।

७) फिर नाविक की पतवार की तरह दोनों पैर मिलाकर एक साथ चलाइये।

८) अब धीरे-धीरे दोनों हाथों को भूमि पर फैलाकर बिना सहारे के पैरों को ऊपर सीधा रखने का प्रयास कीजिए।

९) अब पैरों की पीछे की ओर धीरे-धीरे मोड़ते हुए भूमि पर टिका दें। ध्यान रहे दोनों घुटने सीधे रहें।

१०) इसी स्थिति में थोड़ी देर रुक कर धीरे-धीरे कमर को सीधा करते हुए पैरों को सीधा भूमि पर रखकर शवासन में विश्राम कीजिए।
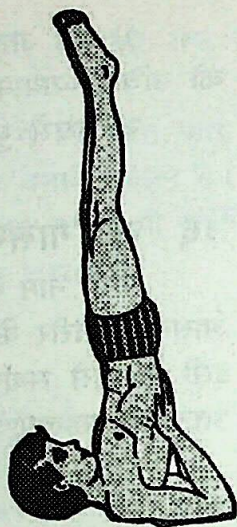
११) सबसे अन्त में दोनों हाथों को नितम्बों के नीचे (हिप) रखकर गर्दन को पीछे मोड़ते हुए शिर को भूमि से लगाइये। आँखों को बन्द रखें। ५० सेकण्ड स्थिति रहकर पहले गर्दन सीधा करें, फिर हाथों को नितम्बों से बाहर निकाल कर शवासन में पूर्ण विश्राम कीजिए।

(सर्वांगासन)

सावधानी :-

१) इस आसन में ठोड़ी को सीने के साथ अच्छी तरह दबाकर रखनी चाहिए। इसे ही जालन्धर बन्ध, कहा जाता है।

२) यह आसन सुबह-शाम दोनों समय किया जा सकता है। परन्तु प्रारम्भ में कुछ सेकण्डों से करें। पूर्ण अभ्यास होने पर १०-१५ सेकण्ड तक करना चाहिए।

३) इस आसन को श्वास भरकर प्रारम्भ करते हैं परन्तु वाद में लम्बी गहरी श्वास-प्रश्वास लेते रहते हैं।

४) इस आसन को स्त्रियाँ तथा वृद्ध कर सकते हैं। ऐसे लोगों को दीवार के सहारे इसका अभ्यास करना चाहिए।

५) महासुगन्धित तैल या महालाक्षादि तैल की गर्दन, कन्धे और मस्तिष्क के अंगों की मालिश करके इस आसन को करना चाहिए। आसन के बाद भी मस्तक और गर्दन के अंगों कों धीमे हाथ से मालिश करनी चाहिए।

६) आँख, कान, दाँत या गले की बीमारी में भी यह आसन न करें।

लाभ :-

१) सर्वांगासन से रक्त संचार (ब्लडसर्कुलेशन) क्रिया बदल जाती है। इससे प्राणधारक अवयवों की पर्याप्त मात्रा में रक्त प्रवाह हो जाता है और उन्हें चेतना प्राप्त होती है। इसलिए नियमित सर्वांगासन के अभ्यासी को आँख, कान, नाक तथा मुख सम्बन्धी कोई भी विकार नहीं होता तथा दीर्घ काल तक स्मरण शक्ति बनी रहती है।

२) इस आसन से शीध्र ही बुढ़ापा नहीं होता तथा दीर्घ काल तक स्मरण शक्ति बनी रहती है।

३) इससे थाइरॉइड और कण्ठ-ग्रन्थि पर चमत्कारिक प्रभाव पड़ता है। नियमित अभ्यासी चिरयुवा बना रहता है।

४) इससे पेट के स्नायुओं की कार्यक्षमता बढ़ती है तथा निकली हुई तोंद घट जाती है। इस आसन को नियमित रूप से करने से हर्निया नहीं होता।

५) इससे मसूड़ों और दाँतों को रक्त प्रवाह प्राप्त होता है जिससे किसी भी प्रकार का दन्त रोग नहीं होता है।

६) इस आसन से छाती, गर्दन और सिर के हिस्सों को समुचित रूप से रक्त मिलता है, जिससे आँख, सिर, बाल और ज्ञान तन्तुओं पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

७) खाँसी, दमा, सर्दी जुकाम, आदि फेफड़ों की तकलीफों के लिए भी सर्वांगासन लाभप्रद रहता है।

८) इससे रक्त संचार की क्रिया नियमित होकर 'हृदय' को स्वस्थ बना रहता है।

९) ऋषिकेश वाले 'श्री स्वामी शिवानन्द जी सरस्वती के अनुसार ब्रह्मचर्य की रक्षा में यह सर्वांगासन अत्यन्त सहायक है। रक्त वर्धक एवं शोधक भी है। स्त्रियाँ की गर्भाशय सम्बन्धि रोगों और बन्धयत्व को दूर करता है।

१०) डॉ० बालकेश्वर प्रसाद के अनुसार 'इस आसन से वृद्धावस्था तथा नपुंसकता (नामर्दी) के लक्षण दूर किये जा सकते हैं। स्त्री पुरुष दोनों के लिए यह समान रूप से लाभकारी है इस आसन से स्त्रियों का बन्ध्यत्व दूर हुआ है। दीर्घकाल तक यह आसन करने से यकृत् और तिल्ली की विकृतियाँ दूर हो जाती है।

मधुप्रमेह के रोग से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है।'

११) इस आसन से पैरों में झुनझुनी, पैर के तलवों तथा पिण्डलियों में दर्द को दूर करता है।

१२) यह नितम्ब (पुट्ठे) जाँघें और कटि प्रदेश की जकड़ को भी दूर करता है। कमर एवं पीठ के दर्द में यह आसन चमत्कारिक लाभ पहुंचाता है।

संक्षेप में सर्वांगासन को हम शक्ति का स्त्रोत कह सकते हैं। यह रोगों के आक्रमण के विरुद्ध काम करता है। इससे केवल हाथ, पैर, गर्दन, कमर आदि बाह्य अंग ही नहीं बल्कि यकृत् तिल्ली, पेन्क्रियाज, जठर, आँतें, हृदय, आदि आन्तरिक भाग भी प्रभावित होते हैं। इन्हें नूतन जीवन शक्ति प्रदान करके सदैव स्वस्थ रखता है। यह आसन रोग का सामना करने वाली प्रति कारक शक्ति में वृद्धि भी करता है।

जो लोग यह आसन इस प्रकार न कर सकें वे अपनी लम्बाई से आधा ऊंचाई का कोई टेबल आदि लेकर उसी के नीचे सोकर उसी पर दोनों पैर रखकर कमर को हाथों से सहारा देकर शरीर को सीधा करें। इस स्थिति में केवल सिर, गर्दन तथा दोनों कन्धे ही भूमि से लगे रहेगें। कम से कम १५ मिनट तक इसी स्थिति में बने रहें तो उपर्युक्त सर्वांगासन के सारे लाभ प्राप्त हो सकते हैं।

अध्याय ५

पेट के बल लेट कर किये जाने वाले आसन

१. मकरासन :-
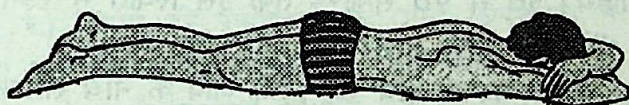
(मकरासन)

विधि :-

१) पेट के बल सीधे लेट जाइये। दोनों पैरों को एक दूसरे से अलग रखकर पंजों का ऊपरी हिस्सा भूमि को स्पर्श करते हुये रखिये।

२) दोनों पैरों की एड़ियां ऊपर की तरफ आपस में मिली हुई रहें। पंजे पीछे की ओर खिंचे हुये रखिये।

३) दोनों हाथों की कोहनियों को जमीन पर टेक लगाकर हाथों की हथेलियों को ठुड्डी के नीचे तथा हाथों की उंगलियों को कनपटी से चिपकाकर रखें।

४) चेहरा सामने की ओर और आंखें बंद रखिये। शरीर को ढ़ीला छोड़ते हुये लम्बी गहरी श्वांस लें और ईश्वर का ध्यान करें।

लाभ :-

१) शवासन की तरह ही यह भी विश्राम का एक आसन है।

२) पेट के बल लेट कर किए जाने वाले आसनों के बीच में यह आसन प्रयुक्त होता है।

२. शलभासन :-
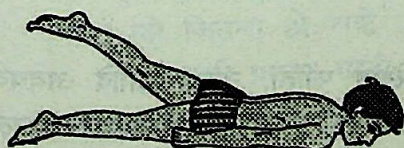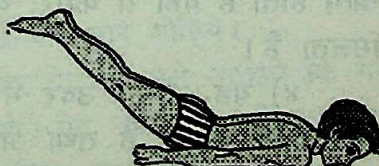
(अर्द्ध शलभासन) (पूर्ण शलभासन)

विधि :-

१) भूमि पर मुंह नीचे की ओर रखकर सीधे लेट जाइये। दोनों हाथ कमर की ओर बगल में रखिये। हाथों की मुट्ठी बांधकर जांघ के नीचे भी रख सकते हैं।

२) अब श्वांस फेफड़ों में भरें और बांयें पैर को लगभग ३० सेमी तक ऊपर उठायें। घुटना सीधा तथा पैर का पंजा ऊंचा उठा होना चाहिये। १० से ५० सैकिण्ड तक इस स्थिति में रहने के बाद पैर को धीरे-धीरे नीचे लाकर भूमि पर रख दें।

४) श्वांस भरकर हाथ की मुट्ठी जांघ के नीचे लगाकर शरीर को तनी हुई स्थिति में रखते हुये दोनों पैरों को एक साथ यथा संभव अधिक से अधिक आकाश में ऊपर की ओर उठाइये।

५) पैरों के तलवे खिंचे रहेंगे तथा पैर, जांघ और पेट का निचला हिस्सा नीचे से थोड़ा उठा हुआ रहेगा।

६) १० से १५ सैकिण्ड इसी स्थिति में रहने के बाद श्वांस छोड़ते हुये धीरे-धीरे पैर जमीन पर रख दें। इस क्रिया को कम से कम ३ बार दोहरायें।

ऊपर वर्णित मकरासन में विश्राम करें।

लाभ :-

१) पश्चिमोत्तान आसन से जहां मेरुदण्ड आगे की ओर मुड़ता है वहीं शलभासन से मेरुदण्ड पीछे की ओर मुड़ता है।

२) शलभासन में भुजंगासन आसन के विपरित नाभी से नीचे के अंगों का समुचित विकास होता है।

३) आंतों में संचित मल को निकालने में यह आसन अत्यन्त उपयोगी है। इस आसन से जहां पेट की फालतू चर्वी खत्म होती है वहीं से कमर, घुटना तथा नितम्ब के दर्द में आराम मिलता है।

४) यह आसन उदर में स्थित प्लीहा, यकृत आदि अवयवों को निरोग बनाता है तथा अण्डकोष की नाड़ियां भी शक्तिशाली बनती हैं।

५) कब्ज, वातविकार, अर्जीर्ण, अतिसार, उदरस्थ वायु तथा

पेट, एवं आतों के समस्त विकार इस आसन से दूर होते हैं।

६) इस आसन के सम्यक् अभ्यास से अर्श, अपेन्डीसाइटिस तथा पैर के तलवों की जलन में आराम होता है।

७) यह आसन गले में नई शक्ति का संचार करता है। मंदाग्नि को दूर करता है तथा जठराग्नि को दूर करता है।

८) इस आसन के अभ्यास से पैरों की सूजन तथा फेफड़ों के रोग दूर होते हैं।

९) स्त्रियों को रजोदर्शन के रामय कन्दस्थान में होने वाली वेदना इस आसन के अभ्यास से मिट जाती है।

१०) इससे जलोदर का रोग सदा के लिये खत्म हो जाता है।

३. भुजंगासन
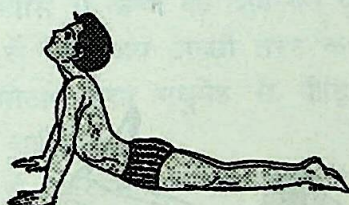
(भुजंगासन)

विधि :-

१) मुख नीचे की ओर रखकर पेट के बल लेट जाइये। तथा शरीर के सभी स्नायुओं को शिथिल कर दीजिये।

२) पैरों के पंजे लम्बे होकर भूमि पर टिकने चाहिये। एड़ियाँ और घुटने भी आपस में मिले हुये रहें।

३) दोनों हाथों की कोहनियाँ मुड़ी हुई ऊपर की ओर तथा उंगलियां कंधों के नीचे जमीन पर रखकर दोनों भुजायें कमर से लगाकर रखें।

४) अब श्वांस भरकर धीरे-धीरे ठुड्डी को ऊपर उठाते हुये गर्दन को जितना हो सके पीछे की ओर मोड़िये।

५) इसी प्रकार छाती और पेट को ऐसे उठाइये कि मेरुदण्ड की प्रत्येक कशेरुका मुड़ती जाये। पेट नाभि तक ही ऊपर उठेगा। शरीर का शेष भाग भूमि पर टिका हुआ रहेगा।

६) १० से १५ सैकिण्ड इसी स्थिति में रुकने के बाद श्वांस छोड़ते हुये मस्तिष्क को भूमि पर टिका दें। इस क्रिया को ५ बार करें।

लाभ :-

१) इस आसन में विशेष कर उदर, पीठ तथा कंधों पर ज्यादा प्रभाव पड़ता है जिससे तोंद पर जमा चर्बी, कमर दर्द, पीठ दर्द तथा कंधे का दर्द दूर होता है।

२) उदरस्थ सभी अंगों पर इस आसन का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है जिससे ये सभी अपने-अपने हार्मोन्स का स्त्रवण भली-भांति करते हैं।

३) महिलाओं में गर्भाशय सम्बन्धी तकलीफें इस आसन के सम्यक् अभ्यास से ठीक हो जाती हैं।

४. धनुरासन
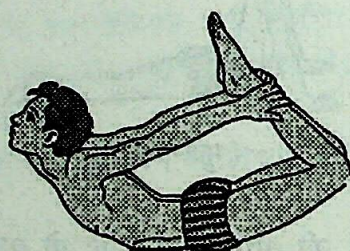
(धनुरासन)

विधि :-

१) पहिले पेट के बल भूमि पर लेट जाइये। दोनों हाथों को बगल में सटाकर रखते हुये दोनों पैरों को पीछे सीधा फैला दें।

२) पैरों को उठाकर पीछे की ओर मोड़िये। ऊपर से हाथ उठाकर दोनों हाथों से दोनों टखनों को पकडिये।

३) अब श्वांस भरते हुये सीना और सिर को धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठाइये। हाथ सीधे और कड़े रखते हुये पैरों को भी खींचते हुये कड़ा कीजिये।

४) जहां तक हो सके अधिक से अधिक आगे तथा पीछे

दोनों ओर से ऊपर की ओर उठें। अब इस स्थिति में आगे-पीछे तथा दांये-बांये पेट पर दबाव देते हुये लुढ़कें।

५) शरीर को ढ़ीला छोड़ते हुये मकरासन में लेट जायें। इस आसन को ५-६ बार करें।

सावधानी :-

१) इस आसन में सारा शरीर पेट के बल पर टिका रहता है। अतः इसे खाली पेट ही करना चाहिये।

२) एक बार श्वांस भरकर आसन प्रारंभ करते है। बीच में फिर लंबी गहरी श्वांस लेते हुये आसन में बने रहते हैं।

लाभ :-

१) इस आसन का पेट पर बड़ा सुन्दर प्रभाव होता है इस आसन के निरन्तर अभ्यास से कब्ज की शिकायत दूर हो जाती है।

२) इस आसन से अग्नाशय अच्छी तरह काम करने लगता है अतः जो व्यक्ति मोटापे तथा मधुमेह से पीड़ित हैं उन्हें यह आसन अवश्य करना चाहिए।

३) इस आसन से उदरस्थ मेद कम होता है तथा आंतों को गति मिलकर पाचन शक्ति बढ़ती है। जिससे उदर गुहा के प्रत्येक अंग को रक्त पहुंच कर उनका पोषण करता है।

४) यह आसन वात सम्बन्धी रोगों में भी अच्छा लाभ करता है

५) कमर की तकलीफों से छुटकारा दिलाता है।

६) रीढ की कूबड़ तथा मेरूदण्ड के अन्य रोगों से छुटकारा दिलाता है। जिससे एकाग्रता बढ़ती है।

५. मयूरासन
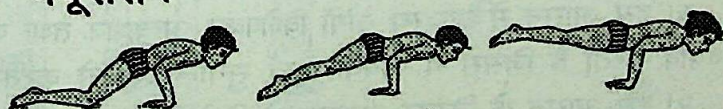
(मयूरासन)

विधि :-

१) दोनों घुटने जमीन पर टेककर बैठ जाइये तथा दोनों घुटनों के बीच थोड़ी जगह रखिये।

२) पैरों को पंजों के बल पर रखते हुये दोनों हाथों की

हथेलियों के बीच ५ सेमी का अन्तर रखते हुये उन्हें दोनों घुटनों के बीच भूमि पर रखें।

३) अंगुलियां धरती पर इस प्रकार जमाइये कि वे पैरों की दिशा बताये दोनों हाथ स्थिर व दृढ़ रखें।

४) अब दोनों कोहनियों को धीरे-धीरे पेट की ओर ले आइये। नाभि के भाग को कोहनी के आस-पास लगाते हुये पैरों को लम्बा करते हुये पीछे से धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठायें।

५) यदि आप शरीर के आगे का भाग सिर की ओर से कुछ नीचे झुकायेंगे तो पैर अपने आप भूमि से ऊपर उठ जायेंगे। जिससे यह आसन सरलता पूर्वक सम्पन्न हो जायेगा।

६) जब आसन में पूर्ण स्थिरता प्राप्त हो जाये तब सिर, पीठ, कूल्हे, जांघ, पैर और पंजे भूमि के समानान्तर एक सीध में रखना चाहिये।

सावधानी :-

१) पैर लम्बे करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि झटका न लगने पाये।

२) पांच से बीस सैकिण्ड तक इस आसन को करना चाहिये।

३) श्वांस भरते हुये शरीर को ऊपर उठाना चाहिये तथा श्वांस छोड़ते हुये आसन को पूरा करना चाहिये।

४) मोटे आदमियों को इस बात की विशेष सावधानी रखनी चाहिये कि वे आगे गिर न पड़ें।

५) प्रारम्भ में इस आसन को मेज, तख्त तथा पलंग आदि पर दोनों हाथों को जमाकर करना चाहिये।

लाभ :-

१) इस आसन में उदरस्थ अंगों विशेषकर अग्नाशय तथा यकृत पर दबाव पड़ता है जिससे ये अपना कार्य सुचारू रूप से करते हैं।

२) इस आसन के निरंतर अभ्यास से त्रिदोषों का शमन होता है।

३) मधुमेह के रोगियों के लिए यह आसन उत्तम माना गया है।

४) इस आसन से फेंफडों का बहुत सुन्दर व्यायाम होता है। इससे रक्त के शुद्धिकरण में भी मदद मिलती है।

५) इस आसन से साधक के शरीर में स्फूर्ति बनी रहती है।

अध्याय ६

खड़े होकर किये जाने वाले सूक्ष्म व्यायाम एवं योगासन

१. पंजों का व्यायाम :-

(अ) दोनों हाथ कमर पर रखकर, एड़ी मिलाकर पंजे खुले हुए रखते हुए खड़े हों। ध्यान रहे हाथ का अंगुठा पीठ की ओर तथा अंगुलियाँ पैर की ओर रहें। अब श्वास भर कर एड़ी ऊपर उठायें पंजों के वल पर ही जल्दी-जल्दी ऊपर-नीचे हों। इसका कम से कम ५-६ चक्र करें।

(आ) तानासन :-

एड़ी मिलाकर पंजे खुले हुए रखते हुए सावधान की मुद्रा में खड़े हों। अब श्वास भरते हुए सामने से धीरे-धीरे हाथों को ऊपर उठायें। साथ ही साथ एड़ियां भी ऊपर उठायें। पूरे शरीर को ऊपर की ओर ताने। फिर श्वास छोड़ते हुए मूल स्थिति में वापिस आ जायें। कम से कम ५-६ चक्र अवश्य करें।
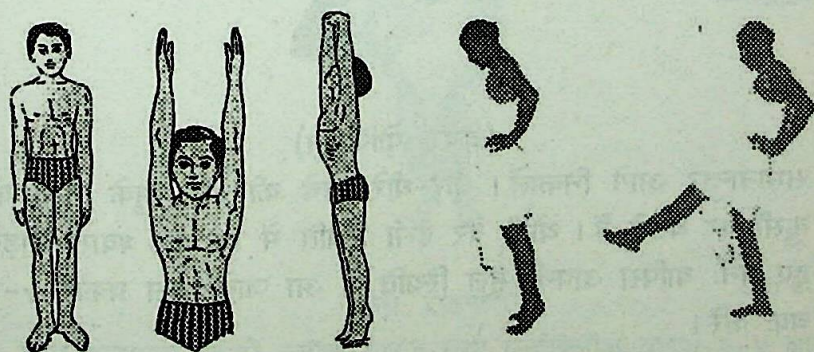
(तानासन की विभिन्न मुद्रायें)

(इ) कमर पर पूर्व की भांति हाथ रखकर खड़े हों। श्वास सामान्य रखते हुए पहले बायें पैर को बाहर सामने की ओर निकाल कर पंजों को ऊपर-नीचे, दांयें-बांये तथा गोलाकार घुमायें। पुनः मूल स्थिति में वापिस आ कर दांयी ओर से ही इसी प्रकार करें। लाभ :- इससे पंजों के जोड खुलेगें, इन रक्त संचार की क्रिया ठीक ढंग से होगी। यूरेटस जमा नहीं होगें, जिससे गठियावात नहीं होगा। पंजों तथा टखनों में सूजन नहीं होगी। शिराऐं अपना काम उचित रीति से करेगी।

२. घुटनों का व्यायाम :-

(अ) चेयर पोजिसन :-

सावधान की मुद्रा में खड़े हों। दोनों पैरों की एड़ियां तथा पंजों आपस में मिले रहेगें। अब श्वास भरकर हाथों को कन्धों के

(चेयर पोजिसन)

समानान्तर आगे निकालें। धीरे-धीरे नीचे की ओर झुके जैसा की कुर्सी पर बैठते हैं। थोड़ी देर इसी स्थिति में रह कर श्वास छोड़ते हुए पुनः वापिस अपनी मूल स्थिति में आ जायें। इस प्रकार ५-६ चक्र करें।

(आ) नी बैन्ड :- दोनों घुटने मिलाकर थोड़ा आगे की ओर निकालकर, दोनों हाथ दोनों घुटनों पर रखकर थोड़ा झुककर खड़े

(नी बैन्ड)

हों। श्वास सामान्य रखते हुए घुटनों को आगे-पीछे-आगे-पीछे करें। ८-१० बार करने के बाद सीधे खड़े हो जाये, विश्राम की स्थिति में।

(इ) नी राउण्ड :- पहले की तरह श्वास सामान्य रखते हुए दोनों घुटनों पर हाथ रखकर, थोड़ा झुके हुए दोनों घुटनों को एक

(नी राउण्ड)

साथ गोलाकार घुमाऐं क्लॉक वाइज तथा एन्टीक्लॉक वाइज ५-५ बार।

(ई) पहिले की भांति दोनों हाथ घुटने पर रखकर थोड़ा घुटना सामने की ओर निकाल कर घुटनों को आगे मिलाते हुये पीछे

खोलते हुये गोल चक्र में घुमायें ५ बार सीधे ५ बार उल्टे (क्लॉक वाइज, एन्टी क्लॉक वाइज)

(उ) पहिले दाहिने पैर को पीछे ले जायें तथा बायें घुटने पर दोनों हथेलियों को जमाते हुये आगे-पीछे-आगे-पीछे हों। बांया पैर

घुटने से मुड़ा रहेगा। दाहिना पैर सीधा रहेगा। इसी तरह दूसरे पैर से भी करें।

३. कमर के व्यायाम :-

(अ) दोनों पैरों के बीच में आधी फुट का अन्तर रखते हुये सीधे खड़े हों। दोनों हाथ कूल्हे के ऊपर रखें (हिप के ऊपर) श्वांस

सामान्य रखते हुये यथा शक्ति पीछे की ओर झुके। थोड़ी देर रुकने के बाद धीरे-धीरे आंखें बन्द रखते हुये पूर्व स्थिति में आ जायें। इसे कम से कम ५-६ बार करें।

(आ) पहिले की तरह खड़े होकर दोनों अंगूठों को पीछे रीढ़ की हड्डी पर लगायें शेष चारों उगंलियां पेट की ओर रहें। अब

पहिले की तरह यथा शक्ति पीछे की ओर झुकें। थोड़ी देर रूकने के बाद पूर्व स्थिति में आ जायें। इसका कम से कम ३ चक्र करें।

(इ) पैंरों में आधा फुट का अन्तर रखते हुये हाथों को पीछे आपस में बांधकर श्वांस छोड़ते हुये धीरे-धीरे कमर से आगे की ओर झुकें। पीछे से यथा शक्ति हाथों को ऊपर उठायें। मस्तक को

यथा संभव घुटनों पर लगाने की कोशिश करें। थोड़ी देर रूकने के

बाद श्वांस भरते हुये धीरे-धीरे ऊपर उठकर सामान्य स्थिति में आयें। इसका भी ५-६ चक्र करें।

(ई) पैरों में डेढ़-दो फुट का अन्तर रखते हुये सीधे खड़े हों। श्वांस भरते हुये पहिले बायें हाथ को कानों से लगाते हुये ऊपर की ओर उठायें। अब श्वांस छोड़ते हुये धीरे-धीरे कमर से दाहिनी ओर
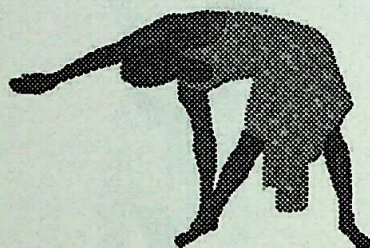
मुड़े। दाहिना हाथ दाहिने पैर से लग जायेगा। इसी स्थिति में थोड़ी देर रुकने के बाद श्वांस भरते हुये धीरे-धीरे सामान्य स्थितिं में आ जायें। दूसरी बार इसी तरह दाहिनी ओर से भी करें। दोनों ओर से कम से कम ५-५ चक्र करना चाहिये।

(उ) दोनों पैरों के बीच डेढ़ फुट का अन्तर रखकर सीधे खड़े रहें। दोनों हाथों को श्वांस भरकर धीरे-धीरे कंधे तक ऊपर उठायें हथेलियां नीचे की तरफ और सीधे खड़े रहें। अब श्वांस छोड़ते हुये बांये हाथ को दाहिने पैर पर रखें तथा दाहिना हाथ ऊपर सीधा खड़ा रहे। दृष्टि उसी ऊपर वाले हाथ की ओर रहनी चाहिये। थोड़ी देर रुकने के बाद वापिस सीधे खड़े हो जायें। फिर दाहिने हाथ को बायें पैर पर रखते हुये बायें हाथ का ऊपर की ओर सीधा खड़ा रखें। दृष्टि पूर्ववत ऊपर वाले हाथ पर हो। श्वांस

भरते हुये फिर पूर्व की स्थिति में वापिस आ जायें। यह एक चक्र हुआ। इस प्रकार कुल ४-५ चक्र करना चाहिये।
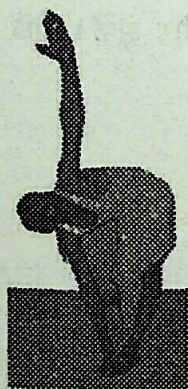
(ऊ) दोनों हाथ कमर पर रखें। श्वांस सामान्य रखते हुये कमर को घड़ी की दिशा में गोल चक्र में ५-५ बार दोनों ओर घुमायें।

लाभ :- कमर के इन सभी आसनों से मेरुदण्ड लचीला बनता है जिससे रक्त संचार की क्रिया सुचारु रूप से होती है। स्लिप डिस्क, साइटिका पेन, अर्थराइटिस (घुटने का दर्द) आदि नहीं होता। कमर का सुन्दर व्यायाम होता है। पेट कमर और जांघों की फालतू चर्वी दूर होकर शरीर सुडौल और दर्शनीय हो जाता है।

कन्धों तथा हाथों का सूक्ष्म व्यायाम :-

(अ) सबसे पहिले हाथों को सामने की ओर सीने के बराबर चौड़ा रखते हुये कन्धों तक ऊपर उठायें। शेष शरीर सरल रेखा में स्थित हो। श्वांस सामान्य रूप से चलता रहेगा। अपना ध्यान दोनों हाथों की उंगलियों पर टिकाते हुये पूर्ण मनोयोग से उंगलियों को बार-बार मोड़े और सीधी करें। ध्यान रहे मुट्ठी नहीं बंद करनी है। कम से कम १ मिनिट तक करें।

(आ) हाथों की हथेलियों को आसमान की ओर रखते हुये बार-बार जल्दी-जल्दी मुट्ठी खोलें और बन्द करें। फिर कम से कम १० बार श्वांस भरते हुये मुट्ठी को कंधे से लगायें।

(इ) पहिले की तरह हाथों को सामने से कंधे के समानांतर ऊपर उठाते हुये सीधे खड़े रहें। इस बार अंगूठा ऊपर की ओर कनिष्ठा उंगली नीचे की ओर स्थित रहेगी। अब श्वांस भरते हुये यथा शक्ति हाथों को मोड़े। हाथ सीधा रहे। इस स्थिति में अंगूठा ऊपर से नीचे की ओर मुड़ जायेगा। इस स्थिति में थोड़ी देर रहने के बाद श्वांस छोड़ते हुये अपनी पूर्व स्थिति में आ जायें। इसी प्रकार दूसरी बार श्वांस भरते हुये हाथों को दूसरी ओर मोड़ें। इस क्रिया को दोनों
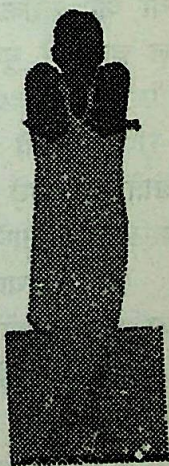
ओर से ३-३ बार करना चाहिये।

(ई) १. सीधे खड़े रहते हुये हाथों को दायें-बांयें कंधो तक ऊपर उठायें। श्वांस सामान्य रखते हुये हथेलियों को कलाई से ऊपर नीचे-२ बार-बार दोहरायें।

२. हथेलियों को क्लॉक वाइज एन्टी क्लॉक वाइज गोल चक्र में ५-५ बार घुमायें।

३. हथेलियों को आसमान की ओर रखते हुये मुट्ठी बंद करके श्वांस भरते हुये १० बार कन्धे से लगायें।

(उ)
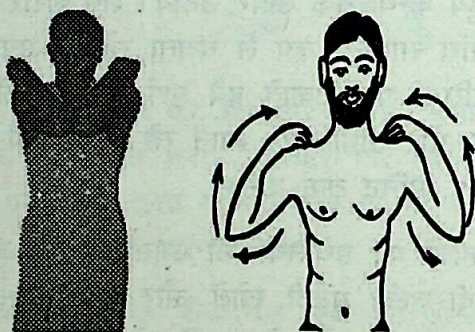
१. पहिले दायें हाथ की उंगलियों को बायें कन्धे से लगाते हुये हाथों को क्लॉक वाइज एन्टी क्लॉक वाइज ५-५ बार करते हुये गोल चक्रों में घुमायें।

२. इसी प्रकार दाहिनी ओर से भी यही क्रिया सम्पन्न करें।

३. दोनों हाथों को कन्धों से लगाते हुये। सामने कोहनी मिलाते हुये पीछे खोलते हुये गोल चक्रों में कोहनी घुमायें। कम से कम ५ बार सीधे ५ बार उल्टे।

४. सावधान की मुद्रा में खड़े हो जायें। मुट्ठी बंद करके श्वांस भरकर धीरे-धीरे दोनों हाथों को ऊपर उठायें। श्वांस भरते हुये कांख तक ले जायें। श्वांस छोड़ते हुये सामान्य स्थिति में आ जायें। इस क्रिया को कम से कम १ बार करें।

५. दोनों हाथों को गर्दन के पीछे ले जाकर कलाई से पकड़

लें। श्वांस भरकर पहिले बायें हाथ को दाहिनी ओर खींचे। थोड़ी देर रोकने के बाद ढ़ीला छोड़ दें। इसी प्रकार श्वांस भरकर दाहिने हाथ को बायीं ओर खींचे। इस क्रिया को दोनों ओर से ५-५ बार सम्पन्न करें।

लाभ :- इन सभी सूक्ष्म क्रियाओं से सर्वाइकल स्पोंडिलाइटिस (कंधे का दर्द) कम्पवात तथा गठिया वात नहीं होता। रक्ताभिसरण की क्रिया ठीक ढ़ंग से होती रहती है।
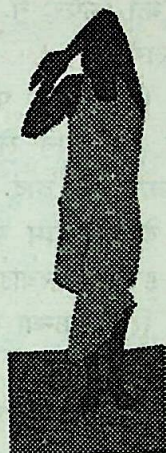
ग्रीवा का सूक्ष्म व्यायाम :-

(अ) श्वांस सामान्य रखते हुये सीधे खड़े रहें। सिर को सीधा रखते हुये गर्दन को पहिले बायीं ओर फिर दाईं ओर मोड़ें। गर्दन को दायें-बायें इतना मोड़े कि ठोड़ी कंधे के समानान्तर आ जाये। आराम से जितना अधिक गर्दन घूम सके वहां तक पहुंच कर कुछ देर रूकना चाहिये। इसी तरह वायीं तरफ से करें। इसके १०-१५ चक्र प्रतिदिन करें।
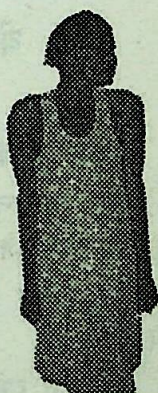
(आ) एक दम सीधे खड़े होकर सामने देखें। अब अपनी ठुड्डी को धीरे-धीरे नीचे करते हुये सीने तक ले जाने का प्रयास करें। यही कुछ देर रूकने के बाद धीरे-धीरे अपनी गर्दन को ऊपर ले जाते हुये पीछे दीवार की ओर देखें। वहीं कुछ देर रूकने के बाद धीरे-धीरे पूर्व स्थिति में लौट आयें। इस व्यायाम को भी कम से कम १० बार करें।

(इ) सीधे खड़े होकर गर्दन को दायीं तरफ झुकायें (मोड़ना नहीं है) और अपने कान से कंधों को छूने का प्रयास करें। अपनी पूर्व स्थिति में आकर इसी प्रक्रिया को बायीं ओर से भी सम्पन्न करें। इस बात का पूरा ध्यान रखें कि केवल गरदन झुकानी है

कंधों को ऊपर न उठायें। कुछ दिनों के प्रयास से कान कंधे तक छूने लगेंगे।

(ई) सबसे पहिले सीधे खड़े होकर दोनों कंधों को एक साथ उठाते हुये कान से छूने का प्रयास करें। १० सैकिण्ड इसी स्थिति में रूकने के बाद धीरे-धीरे अपनी पूर्व स्थिति में वापिस आकर थोड़ी देर विश्राम करें। इस व्यायाम को भी कम से कम १० बार करें। इससे सरवाइकल स्पोन्डीलोसिस (कन्धों का दर्द) नहीं होता। गर्दन, सिर, कन्धा तथा पीठ के ऊपरी भाग का तनाव दूर हो जाता है। इन स्थानों पर होने वाला दर्द और भारीपन दूर हो जाता है। सिर का भारीपन, माइग्रेन तथा चक्कर आना बंद हो जाता है तथा शरीर आगे के भारी आसन करने के लिये तैयार हो जाता है।

पैरों के बल किये जाने वाले आसन

१. गरुड़ासन :-

इस आसन को करते समय शरीर की आकृति गरुड़ जैसी बनती है इसलिये इसे गरुड़ासन कहते हैं।

विधि :-

१) एक दम सीधे सावधान की मुद्रा में खड़े हो जाइये।

२) अब दायाँ पैर भूमि पर सीधा रखते हुए वायें पैर को ऊपर उठाकर दाहिने पैर में लपेट दीजिए। जैसा लता वृक्ष से लिपट जाती है वैसे ही बांया पैर दाहिने में लिपटा दीजिए।

३) हाथों में परस्पर यही लपेट बनाइये। इस स्थिति में दोनों हथेलियां आपस में मिली रहेगी। उँगलियों को गरुड़ की चोंच के समान बनाइये।

४) हाथ को मुँह के बराबर सामने रखते हुए
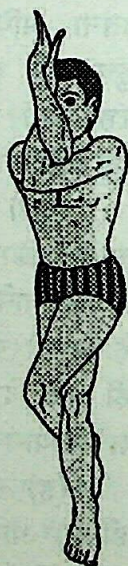
(गरुड़ासन)

श्वास-प्रश्वास क्रिया जारी रखिए। १५-५० सेकण्ड तक इसी स्थिति में रुककर पैर तथा हाथों की स्थिति बदल कर दूसरी तरफ से भी करें।

लाभ :-

१) इस आसन से पैर सशक्त बनते हैं। हाथ-पैर दोनों की नसों में खिचाव होता है। जिससे वे मजबूत बनती हैं।

२) इस आसन से बच्चों की लम्बाई १८-२० वर्ष तक बढ़ जाती है।

३) इस आसन से वृषण की भीतरी पेशियों की सूजन दूर होती है।

४) इससे हाथ-पैर का वातरक्त दूर होता है।

५) इस आसन से एकाग्रता बढ़ती है।

६) विद्यार्थियों को यह आसन अवश्य करना चाहिए।

२. वृक्षासन :-

इस आसन में शरीर की आकृति वृक्ष के समान हो जाती है, अतः इसे वृक्षासन कहते हैं।

विधि :-

१) पहले सीधे सावधान की मुद्रा में खड़े हो जाइये।

२) अब श्वास भरते हुए दोनों हाथों को धीरे-धीरे ऊपर उठाइये। तथा बायें पैर को भूमि से ऊपर उठाकर पैर का तलवा दाहिनी जाँघ के मूल से लगा दीजिए। दोनों हाथों की हथेलियां आपस में मिल जायेंगी।

३) हाथ सीधा ऊपर तना रहेगा। इस प्रक्रिया में स्थिति ऐसी होगी जैसे आप आकाश की ओर नमस्ते कर रहे हों।

४) कम से कम १५ सेकण्ड तक इसी स्थिति में रहकर श्वास छोड़ते हुए अपनी मूल
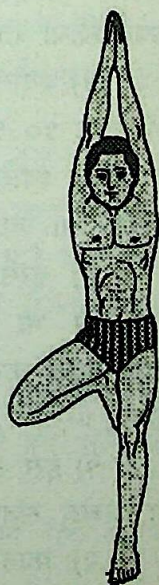
(वृक्षासन)

स्थिति में वापिस आकर दूसरी तरफ से भी यही प्रक्रिया दुहराइये।

५) इसे दिन में ४-५ बार भी कर सकते हैं।

लाभ :-

१) इस आसन से संतुलन का अभ्यास अच्छा हो जाता है।

२) इस आसन से सम्पूर्ण शरीर में समुचित रक्तसंचार हो जाता है।

३) सीना सुडौल बन जाता है तथा फेंफड़ों को ताकत मिलती है।

३. संतुलनासन

विधि :-

१) भूमि पर सीधे सावधान की मुद्रा में खड़े रहिए।

२) अब बायें पैर को इस तरह पीछे की ओर से मोड़िए कि घुटना नीचे की ओर रहें।

३) फिर पैर के पंजे को उसी तरफ वाले हाथ से पकड़िए। दाहिने हाथ को कान से सटाकर ऊपर सीधा तानिये।

४) श्वास भर कर इस आसन को प्रारम्भ करें तथा १०-१५ सेकण्ड तक इसी स्थिति में बने रहें। फिर श्वास छोड़ते हुए सावधान की स्थिति में वापिस आ जायें।

५) इसी प्रकार श्वास भरते हुए दाहिने तरफ से भी सम्पन्न कीजिए। ५-६ बार पैर बदल-बदल कर करना चाहिए।

(संतुलनासन)

लाभ :-

१) इस आसन में गरुड़ासन और वृक्षासन के समान ही शरीर का अच्छा संतुलन बनता है।

२) कान सम्बन्धी रोगों में अच्छा लाभकारी है अतः कान सम्बन्धी रोग वाले व्यक्तियों को यह आसन अवश्य करना चाहिए।

३) सन्धिवात दूर करने में लाभकारी है।

४. नटराजासन :-

(नटराजासन)

नटराज का शाब्दिक अर्थ है- नर्तकों का राजा अर्थात् महादेव शिव। नृत्य की विभिन्न अवस्थाओं के आधार पर आसन बना है। अतः इसे नटराजासन कहा जाता है।

विधि :-

१) सावधान की मुद्रा में दोनों पैरों पर सीधे खड़े रहिए।

२) अब दोनों हाथों को नमस्कार की मुद्रा में मिलाकर उन्हें सीने से सटा दें।

३) अब दाहिने पैर को मोड़ें और उसे धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठाएं। बायें पैर पर सम्पूर्ण शरीर का भार तथा सन्तुलन रखते हुए कमर, कन्धे तथा गर्दन को पीछे की ओर धीरे-धीरे मोड़े।

४) श्वास-प्रश्वास की क्रिया को सामान्य रखते हुए इसी मुद्रा में थोड़ी देर रुकिए।

५) इसके बाद धीरे-धीरे मुड़े हुए गर्दन, कन्धे तथा कमर को सीधा करिऐ तथा घुटने से मुड़े पैर को सीधा करते हुए भूमि पर टिका कर थोड़ी देर विश्राम कीजिए।

६) अब यही प्रक्रिया दूसरी तरफ यानी बायें पैर से भी सम्पन्न करें।

सावधानी :-

१) इस आसन को करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि यह एकाग्रता, सन्तुलन और साधना का सम्मिश्रण है। अतः इसे करते सभय शीध्रता नहीं करनी चाहिए।

२) कमर से गर्दन तक का भाग उतना ही पीछे मोड़ें जितना आसानी से मुड़ सके।

३) ध्यान रहे इस मुड़ी हुई अवस्था में गुदा हुआ सरकक़र पेट की तरफ चले जाऐं तो हाथों को वहीं पर रहने दीजिए।

४) हृदय, अल्सर और हार्निया रोग से ग्रसित व्यक्तियों को इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

लाभ :-

१) इस आसन के अभ्यास से शरीर के प्रत्येक भाग में पर्याप्त लचीलापन आ जाता है अतः नृत्य प्रेमी को यह आसन वरदान स्वरूप माना जाता है।

२) यह शरीर में रोग-प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाकर चित्त में प्रसन्नता एवं आत्मविश्वास का संचार करता है।

३) इस आसन के नियमित अभ्यास से शरीर सुडौल एवं दर्शनीय हो जाता है।

४) इससे दूरदर्शिता, मानसिक एकाग्रता, के साथ-साथ आध यात्मिकता का भी समुचित विकास होता है।

५ उत्कटासन

विधि :-

१) दोनों पैर मिलाकर सीधे खड़े रहिए। अब श्वास भरते हुए पंजों पर उठकर दोनों हाथों को कानों से सटाते हुए सिर के ऊपर ले जाकर नमस्ते की मुद्रा में हथेलियाँ बाँध लें। फिर धीरे-धीरे शरीर को नीचे झुकाइये। इस आसन में ताकत की अपेक्षा सन्तुलन की अधिक आवश्यकता है।

२) दूसरी मुद्रा :- हाथ सीधे रखकर खड़े रहिए। फिर धीरे-धीरे शरीर को पाँच-सात सेमी ऊपर उठाकर पैर की उँगलियों पर सन्तुलन बनाए रखने का प्रयत्न करें। प्रारम्भ में धीरे-धीरे नीचे

की ओर आइए। और पंजों पर बैठ जाइए। इस स्थिति में शरीर का पूरा भार पंजों पर तथा एड़ियां कूल्हे को छूती रहेगी।

दोनों हाथ घुटनों पर रखें। १०-१५ सेकण्ड इसी मुद्रा में बने रहकर पुनः सावधान की मुद्रा में विश्राम करें। ५-६ चक्र सामान्य रूप से इस आसन को किया जा सकता है।

लाभ :-

१) इस आसन में जांघों तथा पंजों का समुचित व्यायाम होता है।

२) फाइलेरिया रोग में इस आसन से बहुत लाभ मिलता है।

३) इस आसन से रीढ़ का सुन्दर व्यायाम होता है जिससे सुषुम्णा नाड़ी का मार्ग खुलता है और एकाग्रता बढ़ती है।

४) उदर रोगों में भी इस आसन का अच्छा प्रभाव पड़ता है।
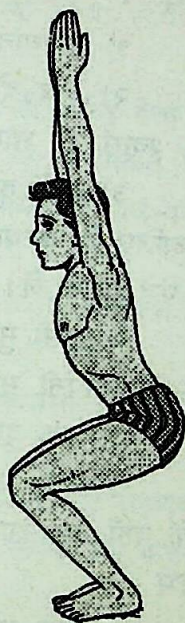
(उत्कटासन)

६ खंजनासन

इस आसन को करते समय शरीर की आकृति खंजन पक्षी के समान हो जाती है अतः इस आसन को खंजनासन कहते हैं।
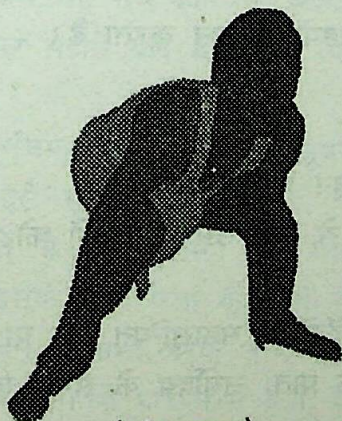
(खंजनासन)

विधि :-

१) सावधान की मुद्रा में सीधे खड़े हो जाइए।

२) अब दोनों पैरों के बीच एक-डेढ़ फुट की दूरी बनाते हुए, श्वास को सामान्य रखते हुए धीरे-धीरे नीचे झुकिए।

३) दोनों हाथों को बाहर से घुटनों के अन्दर से इस प्रकार निकालिए कि कन्धा घुटने से सट जाये तथा दोनों हाथों से दोनों पैर के पंजे पकड़ लें।

४) इसी मुद्रा में १५-५० सेकण्ड तक बने रहने के बाद ध ीरे-धीरे अपनी मूल स्थिति में वापिस आ जाइये। इस क्रिया को ५-६ बार तक दुहराइए।

५) इस आसन को करते समय अपनी दृष्टि जहाँ तक हो सकें वहाँ तक सामने रखना चाहिए।

लाभ :-

१) इस आसन से शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

२) कमर तथा घुटनों का दर्द दूर हो जाता है।

३) हाथों तथा पैरों में रक्त संचार क्रिया ठीक ढ़ंग से होने लगती है जिससे ये अंग सुडौल एवं शक्तिशाली हो जाते हैं।

४) गर्दन तथा सीने की मांसपेशियों को भी अच्छा व्यायाम मिलता है।

५) पेट के स्नायुओं को लचकीला बनाने तथा मन्दाग्नि को दूर करने में यह सहयोग प्रदान करता है।

७ सूर्यनमस्कार आसन

सूर्य नमस्कार के लिए विशेष जानकारी

१. नौ वर्ष से कम उम्र के बच्चों को सूर्यनमस्कार आसन नहीं करना चाहिए।

२: यदि सर्दियों में महासुन्धित तैल या महालक्षादि तैल की सर्वांग मालिश करके प्रातः सूर्योदय के समय खुले स्थान जैसे पार्क

या छत आदि स्थान पर पूर्व की ओर मुँह करके किया जाये तो विशेष लाभ प्राप्त होता है।

३. प्रारम्भ में इस आसन का ३ चक्र करना ही पर्याप्त होता है। बाद में इसे बढ़ाते-बढ़ाते १०० या २०० तक भी ले जा सकते हैं।

४. इस आसन का कम से कम १० चक्र तो अवश्यमेव करना चाहिए।

५. इस आसन के समय शरीर पर लंगोट या जांघिया के सिवा अन्य वस्त्र नहीं होना चाहिए।

६. इस आसन के बाद कुछ देर तक शवासन में विश्राम अवश्य करना चाहिए।

७. पूर्ण लाभ लेने हेतु - चाय, कहवा, कोको, तम्बाकू, शराब, ठण्डा एवं मांस आदि तामसिक पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए।

८. ज्वर या किसी तीव्र रोग की अवस्था में या फिर कोई बड़ा आपरेशन हुआ हो तो व्यायाम कदापि नहीं करना चाहिए।

महिलाओं के लिए विशेष नियम

९. मासिक धर्म होने के समय से ६ दिन तक व्यायाम नहीं करना चाहिए।

१०. ४ महीने का गर्भ होने पर व्यायाम बन्द कर देना चाहिए। प्रसव के चार महीने बाद ही दुबारा व्यायाम प्रारम्भ करना चाहिए।

कुछ लोग सूर्यनमस्कार को भगवान सूर्यनारायण की वन्दना मानते हैं अतः वे इसे सूर्योदय के बाद ही १२ मन्त्रों का पाठ करते हुए ही करते हैं। उन लोगों की मान्यता मूर्तिपूजा से प्रभावित है जबकि इसके साथ ऐसा कुछ भी नहीं है। इसे खाली पेट सुबह-शाम या दिन में कभी करके लाभ उठाया जा सकता है।

इसी प्रकार व्यायाम के प्रारम्भ में तेज, बल, ओज विषयक

किसी भी वेद मन्त्र का पाठ करना सदैव लाभदायक रहता है। क्योंकि इसमें सकारात्मक भावना प्रबल हो जाती है, जिसका विशेष प्रभाव पड़ता है।

सूर्य नमस्कार की कुल १२ अवस्थाएं हैं। इन बारह अवस्थाओं द्वारा शरीर के प्रत्येक अंग को योग्य व्यायाम मिल जाता है। इस सूर्यनमस्कार से आँखों की ज्योति भी बढ़ती है। इन बारह अवस्थाओं में कुल दस आसन हैं और आरम्भ तथा अन्त की दो स्थितियां हैं। ये सभी क्रियाएं अत्यन्त सरल हैं अतः आबाल वृद्ध सभी इसे बड़े आराम से कर सकते हैं।

इस सूर्यनमस्कार की बारह अवस्थाओं का सम्पूर्ण विवरण चित्रों सहित नीचे दिया गया है। प्रत्येक अवस्था का क्या-क्या लाभ है यह साथ ही साथ दिखलाई गयी है। जिससे कोई भी व्यक्ति सोच समझ कर बड़ी आसानी से इसे अपना कर लाभ उठा सकता है।

१ पहली मुद्रा

विधि :-

१) सावधान की मुद्रा में दोनों पैर सीधे रखते हुएं खड़े हो जाइये।

२) अब दोनों हाथों को नमस्कार की मुद्रा में इस प्रकार जोड़े कि अंगूठे सीने का स्पर्श करते रहें। श्वास फेफड़ों में भरते हुए सीना बाहर निकालें और पेट को यथा संभव भीतर की ओर खींचिए।

३) अब दोनों हाथों की कोहनियों को दायें-बायें फैलाइये। दृष्टि सामने रखिए। शरीर, सिर और गर्दन एक सीधी रेखा में रहः चाहिए। मुंह बन्द करके यथा शक्ति कुम्भक कीजिए।

लाभ :-

१) गले के रोग मिटते हैं और स्वर यन्त्र ठीक होता है।

शरीर और मन स्वस्थ बनते हैं।

२) दृष्टि तेज एवं चेहरा तेजस्वी बनता है।

३) इससे एकाग्रता में वृद्धि होती है तथा आत्मविश्वास बढ़ता है।

२ दूसरी मुद्रा

विधि :-

१) नमस्कार की मुद्रा से श्वास भरकर ही दोनों हाथों को ऊपर उठाकर पूरे शरीर को पीछे की ओर खींचिए।

२) अब आँखों को खुला रखते हुए आकाश को देखिए तथा पीछे की ओर जितना झुक सकें उतना झुकिए।

३) सीना फुलाइए तथा बाहर की ओर निकालिए।

लाभ :-

१) दोनों कन्धों और अन्ननली को पोषण मिलता है तथा उससे सम्बन्धित रोग मिट जाते हैं।

२) आँखों की शक्ति में वृद्धि होती है।

३) सर्वाइकल व स्लिप डिस्क सम्बन्धि रोग दूर हो जाता है।

४) मेरुदण्ड लचकीला एवं पैर सुडौल बनते हैं।

३. तीसरी मुद्रा

विधि :-

१) दूसरी अवस्था से श्वास छोड़ते हुए धीरे-धीरे कमर से नीचे की ओर झुकिए।

२) दोनों हाथों की हथेलियां दोनों पैरों के बगल में टिका दीजिए। दोनों हाथों के अंगूठे भी पैरों के अंगूठों की सीध में रखिए।

३) इसके बाद धीरे-धीरे नाक तथा ललाट को घुटने के करीब लाने का प्रयास कीजिए।

सावधानी :-

१) ध्यान रहे प्रारम्भ में अंगुलियां भूमि पर न लगें या थोड़ी सी लगें तो कोई चिन्ता की बात नहीं है।

२) इसी प्रकार सिर के भाग को भी बलात घुटने से लगाने का प्रयत्न न करें।

लाभ :-

१) इससे पेट का रोग समूल नष्ट होता हैं। सीना बलिष्ठ बनता है। हाथ भी शक्तिशाली बनते हैं, शरीर सुन्दरं एवं दर्शनीय बनता है।

२) पैरों की अंगुलियों का रोग मिट कर नई शक्ति का संचार होता है।

३) डाईबिटीज तथा मोटापा का रोग भी दूर हो जाता है।

४) कब्जियत दूर होती है, तथा भूख खुल कर लगती है।

४ चौथी मुद्रा

विधि :-

१) बायीं नाक से धीरे-धीरे पूरक करके बायाँ पैर इस प्रकार पीछे ले जाइए ताकि उस पैर का घुटना तथा पैर की उँगुलियां भूमि का स्पर्श करें।

२) अब दाहिने पैर का घुटना दाहिनी ओर बगल के आगे लाइए। पेट ठीक ढ़ंग से दबना चाहिए।

३) इसके बाद सिर उठाकर जितना अधिक आप ऊपर की ओर देख सकें, देखने का प्रयास कीजिए। इस स्थिति में कमर झुकी हुई तथा श्वास रोके रहना चाहिए।

लाभ :-

१) इस आसन से छोटी आँत पर विशेष रूप से जोर पड़ता है तथा वीर्य वाहिनी नसें खिंचती हैं, जिससे कब्ज तथा जिगर के रोग दूर होते हैं।

२) इस मुद्रा का धातु क्षीणता में विशेष लाभ होता है।

३) काकल जैसे गले के रोग भी मिट जाते हैं।

५ पांचवीं मुद्रा

विधि :-

१) कुम्भक जारी रखते हुए ही दूसरा दाहिना पैर भी पीछे ले जाइए। अँगूठे, टखने और घुटने एक-दूसरे का स्पर्श करें इस प्रकार दोनों पैरों को भूमि पर जमाइए।

२) सिर दोनों कोहनियों के पास दृष्टि नाभि पर रखते हुए कमर के भाग को अधिकाधिक बाहर की ओर निकालिए। इससे कमर घुटना तथा एड़ी एक सीध में रहेगें। शरीर तना हुआ रखिए।

३) पूरे शरीर का भार दोनों हथेलियों तथा पैर के पंजों पर रहेगा।

लाभ :-

१) इससे विशेष रूप से हाथ, पैर और घुटनों का दर्द दूर होता है।

२) मोटी तथा भद्दी कमर, पतली एवं सुडौल हो जाती है।

३) पेट के तमाम रोगों की दृष्टि से यह मुद्रा अत्यन्त लाभदायक मानी जाती है।

६ छठवीं मुद्रा

विधि :-

१) पहले श्वास भरते हुए सीना, घुटना, पैर तथा मस्तक को भूमि पर लगाइए। ध्यान रहे सीना दोनों हाथों के बीच में ही रहेगा।

२) अब श्वास बाहर छोड़ते हुए पेट को अन्दर की तरफ खीचें। कमर का भाग भूमि से न लगे इस बात का विशेष ध्यान रखें।

लाभ :-

१) इससे हाथ बलिष्ठ बनते हैं।

२) स्त्रियों को सगर्भावस्था से पूर्व यह व्यायाम अवश्य करना चाहिए। इससे गर्भाशय सम्बन्धि समस्त रोग नष्ट होते हैं।

तथा दूध पीते बच्चे को कोई रोग नहीं होता।

७ सातवीं मुद्रा

विधि :-

१) श्वास भरते हुए धीरे-धीरे सीना बाहर की ओर निकालते हुए सिर को सीधा कीजिए।

२) हाथ सीधा कोहनियां आकाश की ओर गर्दन पीछे की ओर झुकी हुई तथा दृष्टि सामने रहनी चाहिए।

३) अब कमर को गोलाकार बनाते हुए अधिक से अधिक पीछे की ओर मुड़ें।

लाभ :-

१) इससे निस्तेजस्विता दूर होकर चेहरा लाल हो जाता है, तथा आँखों का तेज भी बढ़ता है।

२) रज-वीर्य सम्बन्धि समस्त विकार दूर होते हैं।

३) रक्त संचार की क्रिया ठीक होने से मुख की कांति तथा शोभा बढ़ती है।

४) कमर तथा कन्धे का दर्द दूर होता है।

५) पेट का मोटापा दूर होता है।

८ आठवीं मुद्रा

विधि :- इस आसन की विधि एवं लाभ इसी आसन में वर्णित पांचवीं आकृति के समान है।

९ नवीं मुद्रा

विधि :- इसकी भी विधि एवं लाभ चौथी मुद्रा के समान ही है। अन्तर केवल इतना है कि इसमें बायाँ पैर आगे तथा दाहिना पैर पीछे लम्ववत् रहेगा।

१० दसवीं मुद्रा

विधि :- इस आसन की विधि एवं लाभ तीसरी मुद्रा के समान होगी।

११ ग्यारहवीं मुद्रा

विधि :- इस आसन की भी विधि एवं लाभ दूसरी मुद्रा के समान ही है।

१२ बारहवीं मुद्रा

विधि :- इस आसन की भी विधि एवं लाभ पहली मुद्रा के समान ही है।
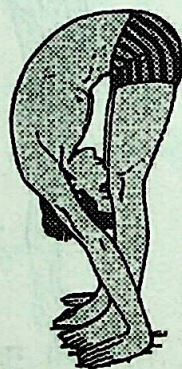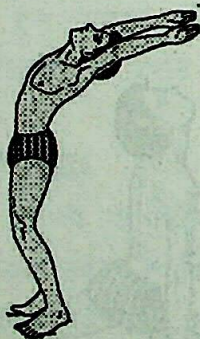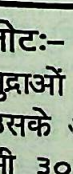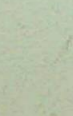
(सूर्य नमस्कार की विभिन्न मुद्राऐं)

अध्याय ७

मुद्रा चिकित्सा

नाम	लाभ
१. ज्ञान मुद्रा	स्मरण शक्ति को बढ़ाती है।
२. आकाश मुद्रा	हड्डियों की कमजोरी को दूर करती है तथा हृदय एवं कान के रोगों में भी लाभकारी है।
३. पृथ्वी मुद्रा	वजन बढ़ाने में सहायक है अर्थात् पतले व्यक्तियों को मोटा करती है।
४. वरुण मुद्रा	शरीर का रूखापन एवं खून की विकृती को दूर करती है।
५. शून्य मुद्रा	कर्ण रोगों में लाभकारी
६. वायु मुद्रा	ये वात रोगों में लाभकारी है।
७. सूर्य मुद्रा	ये पृथ्वी मुद्रा के विपरित है अर्थात् वजन घटाने में लाभकारी है तथा इससे मानसिक तनाव में भी कमी आती है।
८. प्राण मुद्रा	रोग-निरोधक क्षमता को बढ़ाती है।
९. अपान मुद्रा	विजातीय तत्वों को शरीर से बाहर निकालती है।
१०. अपान वायु मुद्रा	हृदय सम्बन्धि रोगों में लाभकारी है।

१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८. ९. १०.

नोटः- जो व्यक्ति जिस बीमारी से पीड़ित है वह चार्ट में सम्बन्धित मुद्राओं को देखकर प्राणायाम करते समय वही मुद्रा अपनाये जो उसके अनुकूल है। इसके अलावा इन मुद्राओं को हम दिन में कभी भी ३० से ४५ मिनिट का समय दे कर बना सकते हैं।

अध्याय ८

प्राणायाम का महत्व, अर्थ तथा प्रकार

ओ३म् खं ब्रह्मणे नमः
ओम्! वील चिदारुजत्नुभिर्गुहाचिदिन्द्र बह्निथिः।
अविन्द उस्त्रिया अनु।। (अ० २०-७०-१)

शब्दार्थ :- बीलूचित् - शीघ्रता से ही, अरुजत्नुभिः - शरीर के मलों को छिन्न-भिन्न करने वाले, पीड़ा देने वाले को शान्त करने वाले। गुहाचित् - हृदय देश में स्थित् भीतर छिपी हुई। इन्द्र - हे जीवात्मन्। वाह्निभिः - वहन करने वाले, वायुओं के द्वारा जीवन धारण के कारण भूत प्राणों के द्वारा। अविन्दः प्राप्त करता है। उसियाः - प्रकाश की रेखाओं को, ज्ञान की किरणों को। अनु - अनुसरण करता है।

व्याख्या :- हे जीवात्मन्! दृढ़ अन्तकरण में विराजमान रह कर तू मलों को छिन्न-भिन्न करने वाले प्राणों के द्वारा प्रकाश की रेखाओं को अर्थात् ज्ञान की किरणों को शीघ्रता से ही प्राप्त करता है, अर्थात् अपने अनुकूल करता है।

जब तक प्राण शरीर में रहते हैं, तथा शरीर में प्राणाग्नि या जीवाग्नि भी रहतीं है। यही प्राणाग्नि यदि शरीर के भीतर सम होकर कार्य करती है, तभी शरीर को सुख देती है। परन्तु जब यह विषम हो जाती है तब यह पीड़ाकारक बन जाती है। लेकिन प्राणायाम की क्रिया से जब प्राणों को वश में कर लिया जाता है तब यही प्राण पीड़ा के स्थान पर सुखकारक (आनन्ददायक) हो जाते है।

जैसे ही प्राण आपके वश में होने लगेंगे, आपके शरीर के सम्पूर्ण रोग नष्ट होने लगेंगे, जिसके परिणाम स्वरूप शरीर स्वस्थ

हो जायेगा। ज्यों-ज्यों आप का प्राणों पर अधिकार बढ़ता जायेगा त्यों-त्यों प्राण अति सूक्ष्म होकर मलों तथा आवरणों को छिन्न-भिन्न करके आत्मज्योति को प्रकट कर देगे। अतः प्राणविद्या को भलीभोति सीख कर प्राणों को वश में करने का उपाय करना चाहिए।

इसी से महर्षि पतंजलि ने भी कहा है कि ''ततःक्षीपतेप्रकाशावरणम्'' (यो० २/५२) अर्थात् प्राणायाम के अभ्यास से अज्ञान का पर्दा हट कर ज्ञान का प्रकाश हो जाता है। महर्षि पुनः आगे लिखते है कि ''धारणासु च योग्यता मनसः'' अर्थात् मन की धारणा शक्ति भी बढ़ जाती है। जैसाकि महर्षि मनु ने भी कहा है कि -

''दह्यन्ते ध्यायभानानाम् धातूनाय् हियथा मलाः।
यथेन्द्रियाणाम् दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्।। मनु.- ६/७१

अर्थात् जिस प्रकार से धातुओं का मल अग्नि में तपाने से नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार से प्राणायाम के अभ्यास से इन्द्रियों के मल नष्ट हो जाते हैं।

कठोपनिषद् में भी कहा है कि -

यदापंचावत्रिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसासह।
बृध्दिश्य न विचेष्ठते तामाहुः परमागतिम्।।
तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रय धारणाम्।। (६-१०-११)

जब मन के साथ पांचों ज्ञानेन्द्रियाँ स्थिर हो जाती हैं, और बुध्दि भी स्थिरता को प्राप्त हो जाती है, उस अवस्था को परमगति कहते हैं, इन्द्रियों की उस निश्चल धारणा को योग मानते हैं।

इसलिए जिसे इन्द्रियों को वश में करके उनसे यथायोग्य उपयोग लेना हो तो उन्हें प्राणायाम विधिवत् अभ्यास करना चाहिए। इसी से चारों वेदों के मन्त्रद्रष्टा, प्राणायाम के महाज्ञानी, वर्तमान युग के अनुपम योगी महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती महाराज लिखते हैं कि -

"जव मनुष्य प्राणायाम करता है, तब प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता जाता है, जव तक मुक्ति न हो, तब तक उसके आत्मा का ज्ञान बराबर बढ़ता जाता है- जैसे अग्नि में तपाने से सुर्वणादि धातुओं का मल नष्ट होकर शुद्ध होते हैं, वैसे प्राणायाम करके मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं। ....प्राण अपने वश में होने से मन और इन्द्रियां भी स्वाधीन होते हैं। बल पुरुषार्थ बढ़कर बुद्धि तीव्र सूक्ष्म रूप हो जाती है, कि जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को भी शीघ्र ग्रहण करती है। इससे मनुष्य शरीर में वीर्य वृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर, बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता, सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में समझ कर उपस्थित कर लेगा। स्त्री भी इसी प्रकार योगाभ्यास करें"

प्राणायाम के अभ्यास में ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण बिन्दु :-

१. स्थान :- कंकड़, धूल, मच्छर, कीड़ों से रहित निरूपद्रव स्थान में जो न अति ऊँचा हो न अति नीचा हो, बल्कि समभूमि हो, आस-पास कोई अन्य वस्तु न हों, पांच फुट दूरी तक चारों ओर खाली स्थान हो। इसीलिए नदियों का संगम, तट, पहाड़ों की तलहटी, गुफाएँ, वृक्षों से हरे-भरे जंगल अथवा जलाशयों के पास या शहरों में स्थित पार्कों में भी अभ्यास किया जा सकता है। यदि बाहर ऐसी सुविधा न हो तो अपने घर में ही एकान्त शान्त तथा हवादार स्थान प्राणायाम के लिए निश्चित कर लेना चाहिए।

२. जल :- जल में सल्फर व कैल्शियम आदि की मात्रा अधिक नहीं होना चाहिए, शुद्ध वर्षा का जल, या फिर कूप जल श्रेष्ठ माना जाता है। ज्यादा वर्षा वाला स्थान तथा जहाँ बिल्कुल वर्षा नहीं होती हो, वह स्थान उपयुक्त नहीं होता।

३. अग्नि-प्रकाश :- प्राणायाम वहाँ बैठकर करना चाहिए जहाँ पर सूर्य का प्रकाश दिन में कभी न कभी अवश्य पहुँचता हो तथा अन्धेरा न रहता हो ऐसा स्थान भी न हो जहाँ बिल्कुल धूप हो तथा अति तीव्र प्रकाश हो। जहाँ सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँचता वहाँ हवन द्वारा भी यह गुण प्राप्त कर लेना चाहिए।

४. वायु :- तेज वायु रुक्षता उत्पन्न करती है तथा उसमें मल आदि भी मिला रहता है। अतः निर्वात स्थान हो, वायु में गर्मी न हो, जीवनी शक्ति ज्यादा हो, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक वायु न हो, अतः ४ से ६ प्रातः तथा ६ से ८ बजे सायं काल प्राणायाम साधना हेतु सबसे उपयुक्त रहता है। साधना के समय वायु दायें-बायें से आये तो ठीक रहती है। सुगन्धयुक्त, रोगनाशक, बलवर्धक, पुष्टिकारक हो तो अति उत्तम है। जिधर की वायु हो उध र मुख करके बैठना ज्यादा लाभप्रद माना जाता है।

५. भोजन :- प्राणायाम के साधक को सदैव सात्विक आहार जैसे - फल, सब्जी, दूध, घी, दही, चावल, रोटी व फलों आदि का ही सेवन करना चाहिए। राजसिक जैसे- अति तली-भुनी, मिर्च-मसाले आदि तामसिक जैसे- वासी, सड़ी गली, पैकेट बन्द पुरानी चीजें, शराब मांस आदि पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए।

६. जलपान :- जल शरीर के लिए अति आवश्यक है, परन्तु अत्यन्त जल पीना हानिकारक है भोजन के आधा घन्टे बाद जल पीना श्रेष्ठ रहता है। इसी तरह प्रातः काल उठते ही दो-चार गिलास पानी पीना अत्यन्त लाभकारी रहता है।

७. जागरण :- योगाभ्यासी को ४ बजे तक प्रातः जागरण तथा ९-१० बजे तक रात्रि में शय्या पर अवश्य लेट जाना चाहिए। इस तरह कम से कम ६ घन्टे का सोना ठीक रहता है।

८. शौच :- जागरण के तुरन्त उपरान्त प्रभु की प्रार्थना कीजिए। उसके बाद १०-१५ मिनिट के अन्दर शौच जाने की आदत डालनी चाहिए। शौच से पूर्व ऊषापान करें तत्पश्चात् अग्निसार क्रिया करने से पेट अतिशीघ्र साफ हो जाता है।

९. स्नान :- प्राणायाम साधना से पूर्व यदि अपनी शारीरिक क्षमता अनुसार शीतल या ऊष्ण जल से स्नान कर लिया जाये तो अति उत्तम रहता है।

१०. वस्त्र :- साधकों को अत्यन्त भारी, तंग कसे हुए, रासायनिक तरीके से तैयार धागों के वस्त्र हानिकारक हैं। हल्के सूती, तथा ढीले-ढालें वस्त्र ठीक रहते हैं।

११. उपवास :- प्राणायाम के अभ्यासी को लम्बे उपवासों से सदैव बचना चाहिए। महीने में दो दिन पूर्णिमा व अमावस्या के दिन रसाहार व फलाहार पूर्वक उपवास करना लाभप्रद माना जाता है।

१२. अतिनिर्बल रोगी, गर्भवती स्त्री, भूखा-प्यासा मनुष्य प्राणायाम न करें। प्राणायाम-समाप्त करने के बाद तुरन्त चलना फिरना नहीं चाहिए।

१३. महिला जगत :- मासिक धर्म के समय केवल श्वास-प्रश्वास की हल्की क्रिया तथा बाहर-भीतर प्राणों को रोकने की हल्की क्रिया ही करें। जिससे ज्यादा गर्मी पैदा न हो। गर्भवती महिलायें ३ माह तक सभी प्राणायाम बल पूर्वक भी कर सकती हैं। परन्तु ३ माह बाद हल्के-हल्के प्राणायाम ही करें, जिससे पेट पर अनावश्यक दबाव न पड़े।

१४. रोगी :- रोगी मनुष्य को सदैव किसी योग्य गुरु के दिशा निर्देश में ही प्राणायाम करना चाहिए।

प्राणायाम का अर्थ

प्राणायाम का अर्थ :- प्राण+आ+याम का अर्थ है प्राण को सम्यक्तया संयत करना अर्थात् अपनी इच्छानुरूप प्राणों का निरोध करना तथा उसकी जो बाहर-भीतर आने जाने की स्वाभाविक गति है उसका निरोध करना है। अतः प्राण-वायु को आकर्षण करके शरीर के भीतर कहीं भी धारण करना और वर्जन करने की क्रिया को प्राणायाम कहते हैं, नासिका से बाहरी वायु का आकर्षण करके एक सीमा तक उसको अन्दर धारण कर कौशल के साथ छोड़कर बाहर भी एक सीमा तक धारण करने की क्रिया का नाम

प्राणायाम है। जैसा की महर्षि पतंजलि ने कहा है कि :-

''तस्मिन्सति श्वास प्रश्वासयोर्गति विच्छेदः प्राणायामः''

(योग दर्शन- २/४६)

आसन स्थिर हो जाने पर श्वास-प्रश्वास की गति के विच्छेद को प्राणायाम कहते हैं। जो बाहर से अपान वायु अन्दर आता है, उसे श्वास तथा जो भीतर से प्राण वायु बाहर जाता है, उसे प्रश्वास कहते हैं।

प्राणायाम के प्रकार :- प्राणायाम के तीन अंग हैं रेचक, पूरक और कुम्भक।

रेचक - बाहर फेंकना, पूरक - अन्दर खींचना, कुम्भक - बाहर या भीतर रोकना। इन अंगों के साथ महर्षि पतंजलि के अनुसार चार प्रकार के प्राणायाम होते हैं, प्रकारान्तर भेद से यही अनेक प्रकार के हो जाते हैं।

''बाह्याभ्यन्तर स्तम्भवृतिर्दशकाल
संख्याभिः परिदृष्ठो दीर्घ सूक्ष्मः।।''

(यो. १/५०)

अर्थात् बाह्य-वृत्ति, आभ्यन्तर वृत्ति और स्तम्भ-वृत्ति ये तीन प्रकार के प्राणायाम, देश, काल और संख्या के साथ अभ्यास किये जाने से दीर्घ सूक्ष्म होते हैं। अर्थात् इन तीनों प्रकार के प्राणायामों की देश परिदर्शन, काल-परिदर्शन तथा संख्या-परिदर्शन के साथ किये जाने से दीर्घ-सूक्ष्म बनाया जाता है। तात्पर्य यह है कि प्राणायाम करते-करते अति सूक्ष्म कर दिया जाता है जिससे कि अज्ञान के पर्दे को प्राण हटाने में समर्थ हो सकें।

बाह्यवृत्ति :- प्रश्वास की क्रिया करके प्राणों को बाहर से भीतर आकर्षण करके भीतर ही कुछ-कुछ ठहराना आभ्यन्तर वृत्ति प्राणायाम कहलाता है।

स्तम्भ वृत्ति :- प्राणों को ज्यों का त्यों जहाँ का तहाँ ही ठहरा देने को स्तम्भ वृत्ति प्राणायाम कहते हैं।

बाह्याभ्यान्तर विषयाक्षेपी :-

"बाह्याभ्यन्तर-विषयाक्षेपी चतुर्थः" (यो. २/५१)

अर्थात् चौथा प्राणायाम जो बाहर भीतर रोकने से होता है। जब श्वास बाहर से भीतर को आवे तब प्राणों को विपरीत धक्का देते हुए कुछ-कुछ बाहर ही रोकता रहे तथा जब प्रश्वास भीतर से बाहर को जाने लगे तब भी विपरीत धक्का देते हुए भीतर ही कुछ-कुछ रोकता रहे इसको "बाह्याभ्यन्तर-विषयाक्षेपी चतुर्थ" प्राणायाम कहते हैं।

प्राणायाम

बहुत से भाई प्राण का अर्थ श्वास या वायु लगाते हैं और प्राणायाम का अर्थ केवल और केवल श्वास का व्यायाम मानते हैं, किन्तु यह धारणा गलत तथा भ्रामक भी है क्योंकि प्राण वह शक्ति है, जो वायु में ही नहीं बल्कि समस्त निर्जीव तथा सजीव दोनों प्रकार के पदार्थों में व्याप्त है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसका सम्बन्ध श्वास के साथ ली जाने वाली वायु के साथ भी है, किन्तु यह केवल वायु माना ही नहीं है, बल्कि उसके अन्तर में निहित प्राण शक्ति है। इस दृष्टि से प्राणायाम का अर्थ हुआ प्राण का आयाम यानि विस्तार करना। प्राणायाम का मूल उद्देश्य शरीर में व्याप्त प्राण शक्ति को उत्प्रेरित, संचारित, नियंत्रित और सन्तुलित करना है। जिससे मन सहित पूरा शरीर हमारे नियंत्रण में आ जाता है। इसके प्रतिफल स्वरूप हमारे निर्णय करने की शक्ति बढ़ जाती है और हम सही निर्णय करने की स्थिति में आ जाते हैं।

शरीर की शुद्धि के लिए जैसे हम प्रतिदिन स्नान करते हैं वैसे ही मन की शुद्धि के लिए प्राणायाम की भी परमावश्यकता है। प्राणायाम से ही हम स्वस्थ एवं निरोग रह सकते हैं, दीर्घायु प्राप्त करते हैं, हमारी स्मरण शक्ति बढ़ती है तथा मस्तिष्क सम्बन्धि विकार (दोष) दूर होते हैं। हमारे शरीर के प्रमुख अवयव जैसे- आमाशय, पक्वाशय, अग्नाशय (पेन्क्रियाज) पित्ताशय, यकृत्, प्लीहा, वृक्क, छोटी-बड़ी आंतें तथा पाचन संस्थान के सभी अंग प्रभावित

होते हैं। जिससे हमारी कार्य कुशलता बढ़ती है। प्राणायाम से शरीर की समस्त नाड़ियां (धमनी तथा शिराऐं) परिशुद्ध होती हैं, हमारे स्नायु मण्डल को भी अपार शक्ति मिलती है, मन की चंचलता दूर होती है, मन एकाग्र होकर धीरे-धीरे निरूध हो जाता है जिससे इन्द्रियों पर विजय एवं समाधि लाभ होता है।

महर्षि वेद व्यास जी ने अपने भाष्य में कहा हे कि "तपो न परं प्राणायामात् ततो विशुद्धिर्मलानां दीप्तिश्चज्ञानस्य" अर्थात् प्राणायाम से बढ़कर संसार में दूसरा और कोई तप नहीं है। इससे शरीर के मल घुल जाते हैं और ज्ञान का उदय होता है।

महर्षि मनु जी महाराज ने भी प्राणायाम के विषय में बड़ा सुन्दर लिखा -

दह्यन्ते ध्यायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणास्य निग्रहात्।।

जैसे अग्नि के सम्पर्क से धातुओं का मल नष्ट हो जाता है वैसे ही प्राणायाम करने से इन्द्रियों का मल भी नष्ट हो जाता है। इसी सन्दर्भ में ऋग्वेद के निम्न दो मन्त्र भी ध्यान देने योग्य हैं।

द्वाविमौ वातौ वात आ सिंधोरापरावतः।
दक्षं ते अन्य आंवातु परान्यो वातु यद्रवः।।

(ऋग्वेद- १०-१३७-२)

व्याख्या :- हमारे शरीर में प्राण तथा अपान नामक दो प्रकार की वायु चल रही है। इन दोनों में से एक सिन्धु अर्थात् हृदय तक चलती है तथा दूसरी बाहर के वायुमण्डल तक। हे प्राणायाम के साधक मनुष्यों! उनमें से एक-प्राणवायु तो तुम्हारे अन्दर आरोग्य, बल, उत्साह और जीवन शक्ति को ले आवे और दूसरी अपानवायु भीतर से निर्बलता, रोग और शोकों को शरीर से बाहर निकाल दे।

आवात वाहि भेषजं विवात वाहियद्रपः।
त्वं हि विश्व-भेषजो देवानां इत ईयसे।।

(ऋग्वेद - १०-१३७-३)

व्याख्या :- हे प्राणवायु तू हमारे अन्दर रोगों को नष्ट करने वाली शक्ति को ले आ, और हे अपान-वायु तू हमारे अन्दर से समस्त रोगों तथा निर्बलताओं को बाहर ले जा, क्योंकि हे प्राणशक्ति, तू अवश्य संसार भर के सम्पूर्ण रोगों की अचूक औषधि है, और तू देवताओं अर्थात् दिव्य शक्तियों का दूत बनकर हमारे अन्दर चल रही है।

प्राणों के भेद

यद्यपि मुख्य रूप से प्राण एक ही है परन्तु मानव शरीर में स्थान विशेष पर उनकी स्थिति तथा प्रभाव को देखते हुए इसे पांच भागों में बांटा गया है। इन्हीं पांचों उपभागों को सामान्य रूप से पंच प्राण भी कहा जाता है। जो की इस प्रकार हैं।

प्राण :- यह कण्ठ से हृदय तक व्याप्त है। यह प्राण शक्ति श्वांस को नीचे खींचने में सहायक होती है।

अपान :- यह मूलाधार चक्र के पास स्थित है। यह वायु बड़ी आंत को बल प्रदान करती है जिससे मल-मूत्र का ठीक तरह से निष्कासन होता हे।

समान :- नाभि से हृदय तक रहने वाली वायु को समान कहते हैं। यह प्राण शक्ति पाचन संस्थान तथा उनसे निकलने वाले रसों को उत्प्रेरित और नियंत्रित करती है।

उदान :- कण्ठ से मस्तिष्क तक रहने वाली वायु ही उदान कहा जाता है। इस प्राण शक्ति द्वारा कंठ के ऊपर के अंगों- आंख, कान, नाक, मस्तिष्क आदि का नियंत्रण होता है। इसके अभाव में हमारा मस्तिष्क ठीक से काम नहीं कर पाता और बाह्य जगत के प्रति हमारी चेतना नष्ट हो जाती है।

व्यान :- यह वह प्राण शक्ति है, जो सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त है। इसका मुख्य स्थान स्वाधिष्ठान-चक्र है। यह शरीर की अन्य शक्तियों और प्राण वायु में सहयोग स्थापित करती है और हमारे शरीर की गतिविधियों का नियमन और नियंत्रण करती है।

प्राणायाम की कुछ आवश्यक वातें हमें समझ लेनी चाहिए।

सामान्य रूप से हम कभी बायें कभी दायें कभी दोनों नासिका छिद्रों से श्वास-प्रश्वास की क्रिया करते हैं। यह क्रिया दो मार्गों से सम्पन्न होती है। प्राणायाम की भाषा में दाहिने नथुने को सूर्यनाड़ी और बायें नथुने को चन्द्रनाड़ी कहते हैं।

जब श्वास-प्रश्वास सूर्य तथा चन्द्र दोनों नाड़ियों से समान रूप से चलता है तो उसे सुषुम्ना नाड़ी कहते हैं।

बन्ध :- प्राणायाम करते समय मुख्य रूप से तीन प्रकार के बन्धों का प्रयोग किया जाता है। जो की निम्नलिखित हैं-

१) मूल बन्ध :- मल-मूत्र की दोनों इन्द्रियों को ऊपर की ओर खींचे रहने से यह बंध लगता है।

२) उड्डियान बंध :- श्वास को बल पूर्वक बाहर फेंक कर पेट को अन्दर मेरूदंड की ओर खींचने से लगता है।

३) जालंधर बंध :- छाती को ऊपर उठाते हुए ठोड़ी को कंठ कूप में दबाने को जालंधर बंध कहते हैं।

४) त्रिबन्ध या महाबन्ध :- श्वास को बलपूर्वक बाहर फेंककर पहले मूलबंध फिर उड्डियान बन्ध तथा अन्त में जालंधर बन्ध लगाने को त्रिबन्ध या महाबन्ध कहते हैं।

नाड़ियां :- प्राणायाम की दृष्टि से हमारे शरीर में तीन प्रमुख नाड़ियां विद्यमान हैं जो कि निम्न हैं-

१) इड़ा या चन्द्र नाड़ी :- यह ठण्डी नाड़ी है और शरीर के बायें भाग का और मनुष्य के विचारों का नियंत्रण करती है। यह तमोगुण प्रधान नाड़ी मानी जाती है।

२) पिंगला या सूर्यनाड़ी :- यह शरीर के दायें भाग का नियंत्रण करती है तथा शरीर को गर्मी प्रदान करती है, यह प्राणशक्ति का नियंत्रण भी करती है। रजोगुण प्रधान मानी जाती है।

३) सुषुम्ना नाड़ी :- यह मध्य नाड़ी है। यह मेरूदण्ड में स्थित है और विशुद्धिचक्र से मूलाधार चक्र तक जाती है। इसमें से ३१ जोड़े नाड़ियां निकलती हैं, जिनकी शाखाएं तथा उपशाखाएं पूरे शरीर में पहुंचती है। यह नाड़ी न गर्म है, न ही ठंडी बल्कि दोनों को सन्तुलित रखती है। प्रकाश तथा ज्ञान का मुख्य आधार यह

नाड़ी ही मानी जाती है। इसीलिए इसे सरस्वती या शांति नाड़ी भी कहते हैं। जो कि सतोगुण प्रधान नाड़ी है।

प्राणायाम का मुख्य उद्देश्य इड़ा तथा पिंगला में ठीक सन्तुलन करके सुषुम्ना के द्वारा प्रकाश तथा ज्ञान प्राप्त कराकर आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त करना है। शारीरिक दृष्टि से प्राणायाम इन तीनों नाड़ियों में ठीक-ठीक सन्तुलन बना के आरोग्य, बल शांति तथा दीर्घायु प्रदान करता है।

प्राणायाम

स्थान :- प्राणायाम का स्थान समतल, शुद्ध, शान्त व हवादार होना चाहिए। किसी बगीची या नदी आदि के किनारे जहाँ सीधी, तेज हवा तथा अशुद्ध वायु न हो वहाँ बैठ कर प्राणायाम की साधना करनी चाहिए। तेज पंखे तथा भीड़-भाड़ वाले स्थान पर प्राणायाम नहीं करना चाहिए।

समय :- प्राणायाम की साधना में स्थान के साथ ही साथ समय का भी बहुत बड़ा महत्व है। प्राणायाम के लिए सर्वोत्तम समय ब्रह्मबेला का माना जाता है। क्योंकि प्रातः काल ब्रह्मबेला का माना जाता है। क्योंकि प्रातः काल ब्रह्मबेला में वायुमण्डल शांत होता है, गर्दोगुबार नहीं होता और वायु में ओषजन की मात्रा अधिक होती है। प्राणायाम के समय शरीर शुद्ध एवं मलाशय खाली होना चाहिए। इसलिए प्रातःकाल शरीर शुद्धि के बाद ही निश्चित आसन पर बैठ कर प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। प्राणायाम कभी भी अपनी शक्ति से अधिक नहीं करना चाहिए। प्राणायाम का समय और संख्या धीरे-धीरे बढ़ाना ठीक (लाभप्रद) माना जाता है।

आसन एवं मुद्रा :- प्रायः करके सभी प्रकार के प्राणायाम सुखासन, सिद्धासन या पद्मासन में बैठकर, शरीर को बिल्कुल सीधा रखकर तथा तनावरहित सहज एवं सुखदायक स्थिति में ही करना चाहिए। प्राणायाम का पूरा लाभ लेने के लिए साधक तथा साधिकाओं को पहले आसनों के सम्यक् अभ्यास से शरीर तथा मन तैयार कर लेना चाहिए। प्राणायाम की साधना के लिए आहार-विहार

को पूर्णतया सात्विक रखते हुए षट्क्रियाओं द्वारा शरीर की शुद्धि भी कर लेनी चाहिए। शरीर के किसी भी भाग पर तनाव नहीं रहना चाहिए, दोनों हाथों से ज्ञान मुद्रा बनाकर घुटनों पर रखना चाहिए, आंखें हल्की मुंदी रहें।

प्राणायाम प्रारम्भ करने से पहले थोड़ी देर दीर्घ श्वास-प्रश्वास लेकर दोनों स्वरों को शान्त एवं सम कर लेना चाहिए। शरीर को ढीला कर लें तथा चारों तरफ के विचारों से मन को हटा कर एकाग्र कर लें।

प्राणायाम केवल साधारण श्वास-प्रश्वास की क्रिया मात्र नहीं है। प्राणायाम साधना के समय अपना ध्यान केवल और केवल श्वास-प्रश्वास पर ही लगाये रखना चाहिए। मन में सकारात्मक भावना जितनी प्रबल होगी सफलता भी उतनी ही अधिक होगी। प्राणायाम करते समय श्वास लेने तथा छोड़ने की क्रिया बड़ी धीमी तथा नियन्त्रित रखनी चाहिए। यह सदैव ध्यान रहे कि - प्राणायाम कभी भी शक्ति से अधिक नहीं होना चाहिए। प्रारम्भ में ही अधिक एवं अनियमित रूप से नहीं करना चाहिए, जैसे-जैसे शक्ति तथा अभ्यास बढ़े उसी के अनुसार ही प्राणायाम भी बढ़ाना चाहिए।

कुछ प्राणायामों में नासिका के दायें-बायें छिद्रों को बन्द करने की आवश्यकता होती है। यह सदैव दाहिने हाथ से ही करना चाहिए। अंगूठे से दाहिनी नासिका तथा मध्यमा और अनामिका को हथेली की ओर थोड़ा मोड़कर रखते हुए बायीं नासिका बंद करना चाहिए।

जब नासिका पकड़ने की आवश्यकता न हो तो दोनों हाथ आराम से घुटनों पर रखें।

प्राणायाम की तीन प्रमुख क्रियाऐं :- प्राणायाम साधना में प्रमुख रूप से तीन मुख्य क्रियाऐं की जाती है -

१. पूरक अर्थात् श्वास को अन्दर लेना।

२. रेचक अर्थात् श्वास को बाहर निकालना।

३. कुम्भक अर्थात् श्वास को अन्दर या बाहर रोकना। अन्दर श्वास भरकर अन्दर ही रोकने को 'आंतरिक कुम्भक' और श्वास बाहर निकाल कर बाहर ही रोकने को 'बाह्यकुम्भक' कहते हैं।

प्राणायाम के प्रमुख भेद

प्राणायाम के प्रकारों को लेकर योग के ग्रन्थों में अलग-अलग विचार हैं। इस क्रिया के लगभग ५० प्रकारों का वर्णन ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं। परन्तु यहाँ पर केवल लोम-विलोम, भस्त्रिका, कपाल भाति, अग्निसार, त्रिबन्ध, नाड़ी शोधन, भ्रामरी, ओंकार जैसे प्रतिदिन किये जाने वाले प्राणायामों का सेट तथा शीतकारी, शीतली, सूर्यभेदी, चन्द्रभेदी, उज्जायी प्राणायाम जो की रोग विशेष, ऋतु विशेष में किये जाते हैं, इनका ही वर्णन किया जायेगा।

इनमें भस्त्रिका तथा सूर्य भेदी प्राणायाम विशेष रूप से सर्दियों में लाभदायक रहते हैं। इसी प्रकार शीतली तथा चन्द्रभेदी प्राणायाम गर्मियों में विशेष रूप से लाभदायक रहते हैं, शेष प्राणायाम सामान्य रूप से हर मौसम एवं ऋतु में लाभदायक रहते हैं।

वैसे प्राणायाम की साधना प्रातः काल खाली पेट शुद्ध वातावरण में ही की जानी चाहिए, परन्तु परिस्थिति वश ३-४ घन्टे भोजन के बाद सायं काल भी प्राणायाम का अभ्यास किया जा सकता है।

१) लोम-विलोम प्राणायाम :- नासिका के दायें-बायें दोनों स्वर जब बराबर (सम) चलते हैं तब प्राण सुषुम्ना नाड़ी में प्रविष्ट हो जाता है, तभी विद्युत शक्ति जिसे नब्य योग में कुण्डलिनी शक्ति कहा जाता है, वह जागृत होती है; तब ही प्राणायाम का पूर्ण फल प्राप्त होता है। इसीलिए प्रारम्भ में लोम-विलोम प्राणायाम से दोनों स्वरों को समान रूप से चला कर सम बना लेना चाहिए।

नासिकाओं को बन्द करने की विधि :- दाएं हाथ को उठाकर दाएं हाथ के अंगुष्ठ के द्वारा दायां स्वर तथा अनामिका व मध्यमा अंगुलियों के द्वारा बायां स्वर बन्द करना चाहिए।

विधि :- वाम स्वर (इडानाड़ी) चन्द्रशक्ति या शान्ति का प्रतीक है इसलिए नाड़ी शोधन हेतु अनुलोम-विलोम को बायीं नासिका से ही प्रारम्भ करना चाहिए। अंगुष्ठ के माध्यम से दाहिनी नासिका को बन्द करके बाई नाक से श्वास धीरे-धीरे अन्दर भरना चाहिए। श्वास पूरा अन्दर भरने पर अनामिका व मध्यमा से वाम स्वर को बन्द करके दाहिने नाक से पूरा श्वास बाहर छोड़ देना

चाहिए। पुनः दाएं नाक से ही धीरे-धीरे श्वास अन्दर भरना चाहिए, तथा अन्दर पूरा भर जाने पर दाएं नाक को बन्द करके बायीं नासिका से श्वास बाहर छोड़ देना चाहिए। यह एक प्रक्रिया पूरी हुई। इस प्रकार इस विधि को सतत करते रहना चाहिए। इस प्राणायाम को लगातार बिना विश्राम के १०० से २०० बार तक किया जा सकता है। आगे चलकर २ मिनट से ४ मिनट तक इस क्रिया को कर सकता है। श्वास-प्रश्वास की गति मध्यम रखते हुए धैर्य के साथ करना चाहिए।

लाभ :- यह आधार भूत प्राणायाम माना जाता है। इससे पुराना नजला, साइनस, अस्थमा, खाँसी, टॉन्सिल, मोटापा तथा समस्त उदर रोग एवं कफ जनित विकार नष्ट हो जाते हैं।

२) भस्त्रिका प्राणायाम :- भस्त्रिका का अर्थ है धौंकनी। इस प्राणायाम में लोहार की धौंकनी की तरह श्वास की रेचक-पूरक क्रिया को भस्त्रिका कहते हैं। इसलिए इसे भस्त्रिका प्राणायाम कहते हैं।

पद्मासन या सुखासन में बैठें और छाती गर्दन तथा सिर को सीधा रखें। मुँह को कसकर बन्द रखें। दायीं नासिका को बन्द करके बायीं नासिका से दस बार वेग के साथ जोर-जोर से लोहार की धौंकनी की तरह आवाज करते हुए श्वास को अन्दर खींचें और बाहर निकालें। श्वास बाहर निकालते समय पेट अन्दर तथा श्वास लेते समय पेट बाहर ले जाएं। फिर बायीं नासिका से भी दस बार इसी प्रकार करें। अन्त में दोनों नासिकाओं से एक साथ भस्त्रिका करें। एक समय में ऐसे चार भस्त्रिका प्राणायाम किये जा सकते हैं। कुछ दिनों के निरन्तर अभ्यास के बाद तेज छोटे श्वासों की संख्या १० से क्रमशः २० तक तथा भस्त्रिका प्राणायाम की सम्पूर्ण क्रिया को ४ से बढ़ाकर १० तक किया जा सकता है। एक बार एक चक्र पूरा करने के बाद थोड़े समय तक लम्बी गहरी श्वांस अवश्य लेना चाहिए। जब श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य हो जाये तभी अगला चक्र प्रारम्भ करना चाहिए।

लाभ :- यह सभी ऋतुओं में सामान्य रूप से किया जा सकता है। वात, पित्त, कफ आदि के ठीक हो जाते हैं। नजला,

जुकाम, दमा, सिर दर्द, नासिका सम्बन्धी रोग, साइनस आदि दूर हो जाते हैं। स्मरण शक्ति विकसित होती है। श्वास नली पूरी तरह खुल जाती है। रक्त में गर्मी आ जाती है।

निषेध :- यह प्राणायाम, हृदयरोग, चक्कर आना या उच्च रक्तचाप में नहीं करना चाहिए।

भस्त्रिका प्राणायाम की अन्य विधि :-

किसी भी ध्यानात्मक आसन में सुविधानुसार बैठकर दोनों नासिकाओं से श्वास को दोनों फेंफडों में पूरा नासिकाओं से श्वास को दोनों फेंफडों में पूरा भरना व बाहर भी पूरी श्वास का छोड़ना भस्त्रिका कहलाता है। इसको अपनी सुविधा व सामर्थ्यानुसार दो प्रकार से किया जा सकता है। मन्द गति से या मध्यम गति से। जिनके फेफड़े व हृदय कमजोर हों उन्हें मन्द गति से रेचक तथा पूरक करना चाहिए। स्वस्थ व्यक्ति तथा पुराने अभ्यासी को धीरे-धीरे गति को बढ़ाते हुए मध्यम गति से एक चक्र में लगातार ३० बार करके बाहर श्वास छोड़कर तीनों बन्धों को एक साथ लगाकर यथा शक्ति रोकना चाहिए। जब दिल घवराये बेचैनी बढ़े तब बन्ध छोड़ते हुए धीरे-धीरे श्वास को अन्दर लेना चाहिए। ध्यान रखें श्वास कभी भी बाहर वेग पूर्वक अन्दर नहीं आनी चाहिए। थोड़ी देर लम्बी गहरी श्वास लेने के बाद दूसरा चक्र ही करना चाहिए।

लाभ :- इससे विशेष रूप से दोनों फेफड़े सबल बनते हैं तथा हृदय व मस्तिष्क को भी शुद्ध प्राणवायु मिलने से आरोग्य लाभ होता है। शेष लाभ पूर्ववत् ही हैं।

तृतीय-प्रक्रिया : कपालभांति प्राणायाम

कपालभांति प्राणायाम में ध्यान नासिका के अग्रभाग पर लगाना चाहिए। इस में रेचक अर्थात् श्वास को बल पूर्वक बाहर छोड़ने में ही पूरा ध्यान दिया जाता है। श्वास को भरने का प्रयत्न नहीं करते अपितु सहज रूप से जितना श्वास अन्दर चला जाता है जाने देते हैं, पूरी एकाग्रता श्वास को बाहर छोड़ने में ही होती है। ऐसा करते समय स्वाभाविक रूप से पेट भी आगे पीछे होता रहेगा।

कहने का भाव यह है कि नाभि के भाग को अन्दर की ओर सिकोड़ते हुए श्वास को बलपूर्वक बाहर छोड़ देना चाहिए। लगातार कम से कम ६० बार ऐसा करने के बाद ६१ वीं बार श्वास को बल पूर्वक बाहर छोड़ कर मूलवन्ध, उड्डियानबन्ध तथा जालन्धरबन्ध तीनों को एक साथ लगाना चाहिए। जब दिल घबराये श्वास अन्दर लेने की तीव्र इच्छा उत्पन्न हो तो ऊपर से क्रमशः बन्धों को छोड़ते हुए धीरे-धीरे श्वास को अन्दर लें। अन्दर लेकर थोड़ी देर विश्राम करें। यह एक चक्र पूरा हुआ ऐसे-ऐसे कुल तीन चक्र करने चाहिए।

संकेत :- ध्यान रहे नव अभ्यासी को प्रारम्भ में ३०-३० का चक्र करना चाहिए, बढ़ाते-बढ़ाते ६०-६० तक बढ़ा लेना चाहिए। मोटापे व मधुमेह का रोगी २ मिनिट से ५ मिनिट का एक चक्र करेगा तभी जाकर पूरा लाभ प्राप्त होगा।

प्राणायाम को पूर्ण सकारात्मक भावना के साथ ही करना चाहिए। जैसे बाहर जाती श्वास के साथ यह प्रबल भावना बनानी चाहिए कि मेरा रोग, शोक तथा दर्द आदि समस्त विकार बाहर जा रहे हैं, अन्दर आती हुई प्राणवायु के साथ ओज, तेज और अधिकाधिक ऊर्जा (आक्सीजन) हमारे अन्दर प्रविष्ट हो रही है। जिससे मेरा अंग प्रत्यंग दृढ़ हो रहे हैं।

लाभ :- इस प्राणायाम से नजला, जुकाम, साइनस, मधुमेह, मोटापा, कब्ज तथा धातु सम्बन्धी समस्त विकार आदि दोष नष्ट हो जाते हैं।

चतुर्थ प्रक्रिया : अग्निसार प्राणायाम

यह प्राणायाम चार चरणों में सम्पन्न होता है। जो कि निम्नलिखित हैं-

१) प्रथम चरण :- किसी निश्चित आसन तथा मुद्रा में कमर, पीठ, गर्दन तथा सिर को सीधा रखते हुए बैठ जाइए। श्वास-प्रश्वास की क्रिया सामान्य रखते हुए दोनों अंगूठों को कमर पर लगाकर शेष चारों अंगुलियों को नाभि के पास लगाकर अंगुलियों की सहायता से ५० बार पेट को फूलाना पिचकाना चाहिए।

२) द्वितीय चरण :- पूर्ण सकारात्मक भावना के साथ ध्यानावस्थित होकर पेट पिचकाते हुए प्रश्वास को बाहर छोड़ना तथा श्वास अन्दर लेते हुए यथा सम्भव पेट को फुलाना चाहिए। अर्थात् श्वास-प्रश्वास के साथ लगभग ५० बार पेट को फुलाना-पिचकाना चाहिए।

३) तृतीय चरण :- इस प्राणायाम में सबसे पहले श्वास को दोनों फेंफडों में भरते हैं फिर बल पूर्वक पूरी श्वास को बाहर फेंक देते हैं। फिर जब तक श्वास बाहर आसानी से रूका हुआ है तब तक पेट को ऊपर-नीचे-ऊपर-नीचे बार-बार करते हैं। ऐसा तीन चक्र करने के बाद अगले तीन चक्रों में पेट को अन्दर-बाहर करना चाहिए। इस प्रकार अग्निसार प्राणायाम के कुल ६ चक्र करना चाहिए। इससे विशेष रूप से कब्ज दूर होती है, भूख बढ़ती है शेष लाभ कपालभाति की ही तरह हैं।

४) चतुर्थ चरण :- अब अग्निसार के इस चतुर्थ चरण में पहले श्वास को धीरे-धीरे फुफ्फुसों में भरकर नीचे से मूल बन्ध तथा ऊपर से जालन्धर बन्ध लगाकर पेट को फुलाना-पिचकाना चाहिए। जब तक श्वास आराम से अन्दर रूका हुआ है। इस प्रकार रूक-रूक कर कुल तीन चक्र इस प्राणायाम के करने चाहिए।

लाभ :- इस प्रकार इस अग्निसार प्राणायाम से मोटापा, मधुमेह, कब्ज तथा गैस आदि की व्याधियाँ (बीमारियां) समूल नष्ट हो जाती हैं। लेकिन इस चतुर्थ चरण से विशेष रूप से हृदय, यकृत तथा गुर्दों को विशेष लाभ होता है। इनकी विकृति दूर हो जाती है। इनसे होने वाले समस्त रोग जैसे - बवासीर, कब्ज, रक्त विकृति, मूत्र सम्बन्धि विकार, रक्तचाप तथा हार्टअटैक जैसी बिमारियां दूर होती हैं।

पंचम प्रक्रिया : नाड़ी-शुद्धि

नाड़ी शोधन :-

१. मूलबन्ध लगाकर पद्मासन या सिद्धासन से बैठ जाइये।
२. सिर, गर्दन और रीढ़ की हड्डी एक सीध में रखिये।
३. शरीरस्थ समस्त अशुद्ध वायु को नासिका के द्वारा निकाल दीजिए।

४. फिर बाई नासिका से ४-८ या १२ बार ओ३म् कहते हुए पूरक कीजिए पूरक से पेट अपने आप फूल जायेगा।

५. जालन्धर बन्ध (ठोड़ी को दृढ़ता पूर्वक कण्ठकूप में लगाकर यथा शक्ति १६, ३२ या ६४ बार ओ३म कहते हुये कुम्भक कीजिये। जब अभ्यास वढ़ जाय, तब प्राणायाम मन्त्र कहते हुये उसके अर्थ पर विचार कीजिये।

६. जालन्धर बन्ध हटाकर दाहिनी नासिका से ८, १६ या ३२ बार ओ३म् कहते हुये रेचक कीजिये अर्थात् श्वास बाहर निकाल दीजिये। अब पेट अनायास ही अन्दर चला जायेगा।

७. थोड़ी देर अब वायु अन्दर प्रवेश न होने दीजिये। असह्य होने पर ढ़ीला छोड़ दीजिये। इस क्रिया को उड्डीयान वन्ध कहते हैं।

८. पुनः उसी क्रम से दाहिनी नासिका से पूरक करके यथा शक्ति कुम्भक कर बायीं नासिका से शनैः शनैः रेचक कीजिये।

नोट :- यह एक प्राणायाम हुआ अपनी शक्ति सामर्थ्यानुसार ऐसे - २, ७ से २१ प्राणायाम तक कर सकते हैं।

लाभ :- १० से २० तक यह प्राणायाम करने पर तीन महीने में ही समस्त नाड़ी संशोधन हो जाया करता है। यह प्राणायाम समशीतोष्ण होने के कारण बारहों महीने किया जा सकता है। प्राणायाम के समय ओम का मानसिक जाप अवश्य करते रहना चाहिये।

षष्ठम प्रक्रिया : भ्रामरी प्राणायाम :-

विधि :- १) भ्रामरी प्राणायाम में दोनों अधर आपस में मिलाकर बन्द कर दीजिये। दाँत टकराने नहीं चाहिये। मूल बन्ध भी साथ ही लगा लें।

२) दोनों अंगुठों से दोनों कानों को बन्द करें, तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों को कपाल पर लगायें, अनामिका एवं कनिष्ठा से दोनों आंखों को वन्द कीजिये।

३) सर्वप्रथम गले को सिकोड़ते हुए भ्रामरी का सा शब्द करते हुए पूरक करें। अब पूर्ण शक्ति के साथ भ्रमर का सा शब्द करते हुए धीरे-धीरे रेचक करना चाहिये। जब पूरी श्वास बाहर

निकल जाये तब थोड़ी देर बाहर ही श्वास को रोकें। यह एक प्राणायाम हुआ ऐसे कम से कम ११ प्राणायाम करना चाहिये।

लाभ :- भ्रामरी प्राणायाम से मस्तिष्क की शक्ति का विकास होता है, विद्यार्थियों व मानसिक कार्य करने वाले को विशेष लाभ होता है। चित्त की एकाग्रता बढ़ती है। सिर तथा गले सम्बन्धी विकार नष्ट हो जाते हैं।

सप्तम प्रक्रिया : ओंकार प्राणायाम

पूर्व निर्दिष्ट सभी प्राणायाम कर लेने के बाद श्वास-प्रश्वास पर अपने मन को टिकाकर प्राण के साथ उद्‌गीथ ओम् का ध्यान करें। प्रभु ने भ्रूवों की संरचना ओंकारमयी बनायी है। यह पिण्ड (शरीर) तथा समस्त ब्रह्माण्ड की रचना ओंकारमय ही है। ओंकार कोई आकृति विशेष न होकर अपितु एक दिव्य शक्ति है जो इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का संचालन कर रही है। दृष्टाभाव से प्रत्येक श्वास-प्रश्वास के साथ दीर्घ व सूक्ष्म गति से लेते और छोड़ते हुए ओ३म का ध्यान करना चाहिए।

विधि :- मन को भृकुटी पर केन्द्रित करते हुए श्वास को अन्दर दोनों फुफ्फुसों में पूरा भरें। फिर ओठ को गोल बनाते हुए मधुर ध्वनि से ओंकार का नाद करें। नाद पूरा होने पर थोड़ी देर बाह्यकुम्भक की स्थिति में रूककर पुनः रेचक करें।

इस प्रकार ११ बार ओंकार प्राणायाम करने के बाद ओंकार का सर्वरक्षक प्राणप्रदाता, दयालु, न्यायकारी आदि अर्थों का भली-भांति चिन्तन करते हुए ध्यान करना चाहिये। प्रणव के साथ-साथ गायत्री आदि मन्त्रों का भी अर्थ चिन्तन पूर्वक जप व ध्यान करना चाहिये।

रोगों की दृष्टि से कुछ विशेष प्राणायाम

१) सूर्यभेदी प्राणायाम :-

विधि :- किसी भी ध्यानात्मक आसन से बैठकर दाहिनी नासिका से पूरक करें। यथा शक्ति कुम्भक करके बायीं नासिका से शनैः शनैः रेचक कीजिये। इसी प्रकार १० बार से २० बार तक कर

सकते हैं। इस प्राणायाम से शरीर में उष्णता बढ़ जाती है। इसीलिए इस प्राणायाम का अभ्यास शीत ऋतु में अधिक लाभदायक रहता है।

लाभ :- सिर सम्बन्धी विकार, कृमि रोग और ८४ प्रकार के वायु विकार समूल नष्ट हो जाते हैं।

निषेध :- हृदय रोगियों को नहीं करना चाहिए। दमा वालों को इस प्राणायाम में कुम्भक नहीं करना चाहिए।

२) चन्द्रभेदी प्राणायाम

नाम :- इस प्राणायाम में पूरक बार-बार चन्द्र स्वर यानि बायीं नासिका से ही किया जाता है, तो चन्द्र नाड़ी जागृत हो जाती है। इसलिए इसे चन्द्रभेदी प्राणायाम कहते हैं।

विधि :- पद्मासन, सिद्धासन या सुखासन में बैठ कर दाएं हाथ के अंगूठे से दायीं नासिका बन्द कर चन्द्र नाड़ी से श्वास भर कर थोड़ी देर कुम्भक करके दाएं स्वर से धीरे-धीरे रेचक करें। यही क्रिया ११ बार कम से कम तथा अधिक से अधिक २१ बार करना चाहिए।

लाभ :- यह प्राणायाम शीतल होता है। रक्त की गर्मी को शान्त करने के लिए अचूक है। फोड़े, फुंसी, चर्म रोग के लिए लाभकारी है। यह सर्दियों में नहीं करना चाहिए।

३) उज्जायी प्राणायाम

नाम :- यह उत्+जयी इन दो शब्दों से मिलकर बना है। जिसका अर्थ है प्राण को वश में करना, इसीलिए इसे उज्जयी प्राणायाम कहते हैं।

विधि :- निश्चित आसन में बैठकर कमर, गर्दन के भाग को सीधा रखते हुए दोनों आंखों को कोमलता से बन्द कर लें। जिह्वा के अग्रभाग को तालु से लगा दें। इसी तरह श्वास का रेचन करते हुए भी ध्वनि स्पष्ट हो। कंठ कूप से श्वास को इस प्रकार खींचें कि गले में मधुर ध्वनि कानों को स्पष्ट सुनाई दे। इसमें कम्पन भी होना चाहिए। इस प्राणायाम को ११ से २१ तक करना चाहिये।

लाभ :- जुकाम, खाँसी, दमा, कफ, टाँसिल आदि की विकृति का शमन करता है। जठराग्नि तेज होती है, भूख खुलकर लगती है। उच्च रक्त चाप में भी हितकारी है। इसे किसी भी ऋतु में किया जा सकता है।

४) शीतकारी प्राणायाम

नाम :- इस प्राणायाम को करते समय शी-शी की आवाज होती है। इस प्रकार करने से ही शरीर में शीतलता आती है इसी से इसे शीतकारी प्राणायाम कहा जाता है।

विधि :- निश्चित आसन पर बैठकर मुख के अन्दर जीभ को ऊपर उठाते हुए, जिस्वा के अग्रभाग को कण्ठ की ओर मोड़ते हुए मध्यभाग को तालू के साथ लगा दें। दांतों की दोनों पंक्तियों को आपस में मिला कर होठों से शीतकार की आवाज करते हुए दांतों से पूरक करें। यथा शक्ति कुम्भक करके नासिकाओं से धीरे-धीरे रेचक करें। इसे १० से प्रारम्भ करके ५० तक कर सकते हैं। इस खडे होकर या प्रातःकाल भ्रमण करते हुए भी कर सकते हैं। जीभ को दांतों के साथ भी लगा सकते हैं।

लाभ :- यह प्यास को मिटाकर शरीर को ठण्डक पहुंचाता है। क्षुधावर्धक एवं विषनाशक है। पित्त को शान्त करता है। यह दान्तों के रोग, मन्द ज्वर, अतिप्रदाह, आलस्य तथा दुर्बलता को दूर करता है।

निषेध :- सर्दी-जुकाम तथा श्वास के रोगी शीतकारी प्राणायाम न करें। इस प्राणायाम को शीतऋतु में भी नहीं करना चाहिए। वात विकार में भी यह हानिकारक माना जाता है।

५) शीतली प्राणायाम

नाम :- इसके सम्यक् अभ्यास से शरीर में शीतलता आती है, इसी से इसे शीतली प्राणायाम कहते हैं।

विधि :- शीतकारी प्राणायाम की विधि में इतना परिवर्तन कर लें कि पूरक भरते समय जिह्वा एवं मुख को चोंच के समान

बनाकर जिह्वा से ही पूरक भरिये। शेष विधि, निषेध तथा लाभ समान है।

लाभ :- इस प्राणायाम से विशेष रूप से 'रूप तथा लावण्यता की वृद्धि करता है।'

६) मूर्च्छा प्राणायाम (षड्मुखीमुद्रा)

विधि :- सिद्धासन या पद्मासन में बैठ कर, दोनों हाथों के अंगूठे दोनों कानों में, दोनों तर्जनी, दोनों आंखों पर, दोनों मध यमा नासिकाओं पर और अनामिका तथा कनिष्ठा को मुँह पर रखकर, समकाय होकर बायीं नासिका से धीरे-धीरे पूरक करें। मूलबन्ध और जालन्धर बन्ध लगाकर यथा शक्ति कुम्भक करके दाहिनी नासिका से शनैः शनैः रेचक कीजिए।

लाभ :- यह प्राणायाम पाँचों तत्वों को भली भांति जानने के लिए किया जाता है। षड्मुखी मुद्रा से ही मूर्च्छा प्राणायाम की सिद्धि हुआ करती है। जिससे मन की एकाग्रता बढ़ती है। मन की एकाग्रता से ही ज्ञान चक्षु खुलते हैं। इस दशा में ही मन संकल्प-विकल्प का त्याग करता है। संकल्प-विकल्प का अभाव ही मुक्तिदाता है। इसलिए यह प्राणायाम जीवन-मुक्ति हेतु विशेष लाभप्रद है।

७) प्लाविनी प्राणायाम

विधि :- पद्मासन में बैठकर दोनों हाथों को ऊपर की ओर सीधे लम्बे कर लें। फिर दोनों नासिकाओं से पूरक भरिये। तत्पश्चात् लेट जाइये। लेटते समय दोनों हाथों को समेट कर तकिये की तरह सिर के नीचे लगा लें। यथाशक्ति कुम्भक करके बैठ जाइये। कुम्भक के समय यह भावना रखिये कि मेरा शरीर रुई के समान हल्का है। फिर धीरे-धीरे दोनों नासिकाओं से रेचक कीजिए।

लाभ :- निरन्तर के अभ्यास से पानी पर पड़े रहने की योग्यता हो जाती है।

अध्याय ९

नेत्र ज्योति वर्धक योगासन एवं औषधियां

आँखें हमारे शरीर का एक अत्यंत कोमल एवं महत्त्वपूर्ण अंग है। आँखें हैं तभी हम इस संसार में परमात्मा द्वारा बनायी कृतियों को देख सकते हैं। एक पुरानी कहावत "दृष्टि है तो सृष्टि है" बिल्कुल सच है। अतः हमारी दृष्टि सलामत रहे इसके लिए जरूरी है कि आँखों की नियमित रूप से देखभाल की जाऐं। अगर हम आँखों की नियमित रूप से देखभाल नहीं करेंगे तो समय से पहले ही ये हमारा साथ छोड़ देंगी।

आँखों की ज्योति बनाए रखने के लिए कुछ उपयोगी बातें।

१. विटामिन-ए युक्त खाद्य पदार्थों का उचित मात्रा में उपयोग किया जाऐ।
२. नेत्रज्योति वर्धक औषधियों का उपयोग किया जाऐं।
३. पढ़ते और लिखते समय बैठने की स्थिति।
४. पर्याप्त प्रकाश की उपस्थिति में नेत्र संबंधी कार्य।
५. आँखों के लिए उपयोगी आसनों का नियमित अभ्यास।

१. विटामिन-ए युक्त खाद्य पदार्थ

जैसे- गाजर, दूध, हरी सब्जियाँ, दालें, सोयावीन आदि का उचित मात्रा में उपयोग करना चाहिए। हालांकि मांस एवं अंडों में भी विटामिन-ए पाया जाता है। किन्तु हम इनको खाने की सलाह नहीं देते क्योंकि एक तो इससे जीव हत्या होती है तथा साथ ही मांस, अंडा भक्षण से शरीर में आलस्य एवं प्रमाद बढ़ता है। अतः हम ज्यादा से ज्यादा शाकाहार के द्वारा विटामिन पूर्ति की सलाह देते है। क्योंकि एक पुरानी कहावत "जैसा खावें अन्न वैसा होवे मन" के अनुसार माँसाहार भक्षण से तामसी प्रवृत्ति बढ़ जाती है जो

शरीर में अन्य व्याधियों की उत्पत्ति का भी मूल बन सकती है अतः हम केवल धार्मिक दृष्टि से ही माँस भक्षण की मना नहीं करते हैं अपितु इसके पीछे एक ठोस वैज्ञानिक कारण भी है। माँसाहार से शरीर में मोटापे तथा गर्मी संबंधी रोग बढ़ जाते हैं।

२. नेत्र ज्योति वर्धक औषधियाँः

आयुर्वेद में हमारे ऋषि मुनियों द्वारा खोजे गए कई नेत्र ज्योति वर्धक योगों का उल्लेख है। हम यहाँ उन्हीं योगों में से कुछ औषधियां जो हमने अपने अनुभव द्वारा सही पाई हैं। उनको प्रस्तुत कर रहे हैं।

अ) आमलकी रसायन — २०० ग्राम
सप्तामृत लौह — ५० ग्राम
मुक्ताशुक्ति भस्म — १० ग्राम
मुक्ता पिष्टी — १ ग्राम

सबको अच्छी तरह मिलाकरके एक काँच की शीशी में रख लेंवे फिर एक-एक चम्मच मिश्रण सुबह-शाम एक-एक चम्मच त्रिफला घृत के साथ सेवन करें।

ब) गोरखमुण्डी अर्क — १५ मिली (सुबह शाम) सेवन करें।

स) अश्वगंधा चूर्ण — १०० ग्राम
आमलकी रसायन — १०० ग्राम
मुलहठी चूर्ण — ५० ग्राम

तीनों को अच्छी तरह मिला कर काँच की शीशी में रख लेवें।

सेवन विधिः- एक-एक चम्मच प्रातः-सायं जल से लेवें। मोतियाबिन्द वालों के लिए औषधियां - उपर्युक्त तीनों योगों के अलावा निम्न योग काम में लेने चाहिए।

१) श्वेत पुनर्नवा के पुख्ता बड़े मूल को भृंगराज के रस में घिस कर आँख में अंजन करना चाहिए। यह योग नेत्र संबंधी सभी रोगों में लाभदायक है।

अथवा

२) पथ्य का पालन करते हुए अपने मूत्र की दो-दो बूंद अवश्य डालना चाहिए।

नोटः- स्वमूत्र चिकित्सा के समय गुड, तैल, खटाई, लाल मिर्च, बेंगन, पालक, अरहर, उड़द, मूंगफली, डालडा इत्यादि पदार्थ वर्जित हैं।

४० साल से ऊपर की अवस्था वाले व्यक्तियों को उपर्युक्त लिखित औषधियों का सेवन अवश्य करना चाहिए।

हम विश्वास के साथ कहते हैं कि इन औषधियों के सेवन करने के साथ कोई व्यक्ति हमारे द्वारा बताये योगासनों को करेगा तो उसे नेत्र संबंधी शिकायतें कभी नहीं होंगी। अगर व्यक्ति पहले से ही इन व्यधियों से पीड़ित है तो वे व्यधियां शीघ्र ही दूर हो जावेगीं।

३. पढ़ते और लिखते समय बैठने की स्थिति का नेत्र ज्योति पर प्रभाव पडता है अगर हम टेड़े बैठकर या लेट कर पढ़ते और लिखते हैं तो हमारी नेत्र ज्योति वहुत जल्दी खराब हो जाती है। आजकल ज्यादातर बच्चे लेटकर या टेड़ी-मेड़ी पोजिशन बनाकर अध्ययन करते हैं अतः अगर नेत्र ज्योति को बरकरार रखना चाहते हैं तो पढ़ते और लिखते समय हमेशा रीढ़ सीधी करके बैठना चाहिए।

४. पढ़ते और लिखते समय पर्याप्त प्रकाश की उपस्थिति का होना भी नेत्रों के लिए अति हितावह है अगर प्रकाश ज्यादा अधिक और ज्यादा कम होगा तो इसका नेत्र ज्योति पर प्रतिकूल प्रभाव पडेगा अतः इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि पढ़ते समय पर्याप्त प्रकाश की मौजूदगी हो तथा जो व्यक्ति लिखते समय वायें हाथ का उपयोग करते हैं उन्हें इस तरीके से वैठना चाहिए कि

प्रकाश उनके दार्यीं तरफ से आवे तथा जो व्यक्ति लिखते समय दाहिने हाथ प्रयोग करते हैं उन्हें इस तरीके से बैठना चाहिए कि प्रकाश उनके वार्यीं तरफ से आवे।

५. नेत्र ज्योति को कायम रखने के लिए हफ्ते में एक बार जलनेति तथा कम से कम तीन-चार बार त्राटक अवश्य करना चाहिए। (जल नेति तथा त्राटक की विधि का वर्णन यौगिक शोधन क्रियाओं में दिया हुआ है।) तथा साथ ही साथ यहां बताये जा रहे सूक्ष्म व्यायामों को प्रतिदिन अवश्य करना चाहिये।

अ) आँखों को दवाब के साथ खोलना तथा बंद करना। इससे पलकों तथा स्नायुओं पर दबाव पड़ता है। यह क्रिया कम से कम १० बार दोहरावें।

आ) आँखों को विविध दिशाओं में घुमाना।

१) दायें-बायें - अधिक से अधिक दार्यीं ओर तथा बार्यीं ओर देखने का प्रयास करें। गर्दन बिल्कुल सीधी रहेगी। इस क्रिया का पुनरावर्तन कम से कम १० बार करें।

२) ऊपर-नीचे - यथा शक्ति ऊपर की ओर देखें फिर यथा शक्ति नीचे की ओर देखें। इस क्रिया का पुनरावर्तन कम से कम १० बार करें।

३) बार्यीं तरफ ऊपर और दार्यीं तरफ नीचे फिर दार्यीं तरफ ऊपर और बार्यीं तरफ नीचे देखें।
इस प्रकार दोनों तरफ से दस-दस बार करें।

४) क्लॉक वाइज तथा एन्टी क्लॉक वाइज आंखों को दोनों तरफ कम से कम १०-१० बार घुमावें।

अध्याय १०

आहार विवेचन

जैसा कि हम पहले भी बता चुके हैं कि "जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन"। अतः योगाभ्यासी का आहार विहार कैसा होना चाहिए इसके बारें में हम यहां संक्षेप नें बता रहे हैं।

आर्ष ग्रन्थों के आधार पर भोजन तीन प्रकार का होता है- सात्विक, राजसी और तामसी।

सात्विक भोजन के अंतर्गत हरी सब्जियां, दूध, घी, मक्खन तथा सभी प्रकार के प्राकृतिक मधुर रस वाले पदार्थ आते हैं ये पदार्थ शरीर में नव शक्ति का संचार करने वाले होते हैं तथा नये रक्त का निर्माण भी करते हैं। अगर योगाभ्यासी व्यक्ति सात्विक आहार का ही सेवन करता है तो आयुर्वेद के मतानुसार उसके तीनों दोष सम रहते हैं।

राजसी भोजन के अन्तर्गत मिठाईयां तथा चटपटी चीजें आती हैं। योगाभ्यासी चाहे तो कभी-कभी इन चीजों का सेवन कर सकता है किन्तु ज्यादा मात्रा में नहीं करना चाहिए।

तामसी भोजन के अन्तर्गत मांस, मदिरा तथा अन्य नशीली चीजें आती हैं। योगाभ्यासी गण अगर चाहते हैं कि उन्हें योगाभ्यास का पूरा लाभ मिले तो उन्हें तामसी भोजन कतई नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे तीनों दोष (वात, पित्त, कफ) कुपित हो जाते हैं और व्यक्ति के शरीर में कई बीमारियों की उत्पत्ति हो जाती है।

योग शास्त्र में मिताहार को भी बड़ा महत्व दिया गया है। हठ योग प्रदीपिका के अनुसार

द्वौ भागौ पूरयेदन्नै स्तोयेनैकं प्रपूरयेत।
वायोः संचारणार्थाय चतुर्थमव शेषयेत्।।

अर्थात् उदर का आधा हिस्सा अन्न से और एक चौथाई हिस्सा पानी से भरें तथा शेष एक चौथाई हिस्सा वायु के मुक्त संचार के लिए रखें।

कहने का भाव यह है कि योगाभ्यासी को कभी भी ठूंस-ठूंस कर भोजन नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे योगासनों का समुचित लाभ तो मिलता ही नहीं साथ ही ध्यान की अवस्था में भी यह बाधक है क्योंकि ज्यादा भोजन कर लेने से अपच, गैस एवं स्थूलता ये तीनों व्याधियां व्यक्ति की साधना में बाधा रूप सिद्ध होती हैं।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि योगाभ्यासी को सात्विक तथा अल्प आहार ग्रहण करना चाहिए अन्यथा योग का पूरा लाभ नहीं मिल सकता।

(आचार्य यज्ञ[illegible] जी)

लेखक – परिचय

जन्म : 5 अक्टूबर 1967 ई.
पिता : श्री राजदेव
माता : श्रीमती भिखनादेवी

1985 में गृहत्याग। शम्भु दयाल वैदिक सन्यास आश्रम गाजियाबाद में अध्ययन। आर्षमहाविद्यालय गुरुकुल कालवा हरियाणा में 30 जून 1986 में प्रविष्ट। लगभग पांच वर्षों तक ब्रह्मनिष्ठ श्रोत्रिय व वेदज्ञ आचार्य श्री बलदेव जी महाराज के चरणों में बैठकर व्याकरण आदि वैदिक वाङ्गमय का अध्ययन कर सन् 1990 में स्नातक बने। झज्झर में रहकर आचार्य श्री सुदर्शनदेव जी महाराज से निरुक्त का अध्ययन। गुरुकुल कालवा में ही रह कर वैद्य बलराम जी से आयुर्वेद का क्रियात्मक अध्ययन। देश के विभिन्न प्रान्तों में वेद प्रचार एवं अनेक वृहद वं वेदपारायण यज्ञों मे ब्रह्मत्व किया। सर्वत्र वैदिक विषयों पर आध्यात्मिक, पारिवारिक एवं प्रेरणादायक हृदयग्राही वेद प्रवचनों से जनता में उत्साह का संचार वर्तमान में पातंजलि योगधाम आर्यनगर, ज्वालापुर हरिद्वार में पूज्यपाद श्री स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज के शिष्यत्व में रहकर योग साधना का क्रियात्मक प्रशिक्षण प्राप्त कर पिछले दो वर्षों से देश के विभिन्न भागों में <u>योग साधना एवं योग चिकित्सा शिविरों का संचालन</u> कर रहे हैं। यौगिक क्रियाओं से स्वयं स्वस्थ रहकर पूज्यपाद आचार्य श्री हम सभी योग जिज्ञासुओं की योग पिपासा को शान्त करते हुए सब को स्वस्थ रखने की दृष्टि से हम सभी में श्रद्धा उत्साह, प्रसन्नता एंव सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास कर रहें है।

रामकुमार वर्मा "साधक"
(सेवानिवृत बैंक अधिकारी)